के कार्य को क्रियात्मक रूप देने में व्यवहारिक कठिनाइयाँ भी हैं। अत: इसमें कुछ दोष भी आ जाते हैं। प्रजातंत्र के प्रमुख दोष इस प्रकार हैं:-

गुणों की अपेक्षा संख्या को महत्व : प्रजातंत्र में गुणों की अपेक्षा संख्या को अधिक महत्व दिया जाता है। इसमें मात्र मतों की गणना की जाती है। प्रत्येक मतदाता चाहे योग्य हो या अयोग्य उसके मत का मूल्य एक ही होता है। प्रजातंत्र का आधार यह अवधारणा है कि सभी व्यक्ति समान है, जबकि समाज के सभी सदस्यों की बौद्धिक क्षमता समान नहीं हैं। प्रजातंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को एक मत देने का अधिकार है अर्थात् वह सबको समान मानता है। अत: अधिक गुणी व्यक्तियों की महत्ता का सही मूल्यांकन नहीं हो पाता।

प्रजातंत्र के दोष

- गुणों की अपेक्षा संख्या को महत्व
- अयोग्यों का शासन
- सार्वजनिक समय व धन का अपव्यय
- धनिकों का वर्चस्व
- दलीय गुटबन्दी
- युद्ध व संकट के समय निर्बल

अयोग्यों का शासन : शासन एक कला भी है। इस हेतु विशेष ज्ञान और क्षमता की आवश्यकता होती है। यदि शासक को इस कला का ज्ञान नहीं है तो पूरे समाज के कल्याण का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता। शासन करने की कला, योग्यता और क्षमता केवल कुछ लोगों में रहती है। किंतु प्रजातंत्र में बहुमत का शासन होता है और योग्य व्यक्ति का मूल्य भी अयोग्य के समान ही आँका जाता है। विकासशील देशों में तो यह स्थिति और भी चिंतनीय है। इसलिए आलोचक प्रजातंत्र को अयोग्यों का शासन भी कहते हैं।

सार्वजनिक समय व धन का अपव्यय : प्रजातंत्र में चुनावों की लम्बी और जटिल प्रक्रिया के पश्चात ही व्यवस्थापिका का गठन हो पाता है। अत्यावश्यक कानूनों के निर्माण में भी कई बार वर्षों लग जाते हैं। चुनावों की प्रक्रिया में काफी धन खर्च होता है। सांसदों, विधायकों, मंत्रियों एवं व्यवस्थापिका से जुड़े अधिकारियों आदि पर भी बड़ी मात्रा में धन खर्च होता है। अत: प्रजातंत्र में धन व समय दोनों का अपव्यय होता है।

धनिकों का वर्चस्व : यह केवल कहने की बात है कि प्रजातंत्र में सभी को समान रूप से राजनीतिक प्रक्रिया में भागीदारी मिलती हैं, लेकिन यह केवल सैद्धांतिक बात हैं। व्यवहार में प्रजातंत्र में चुनाव इतने खर्चीले हो गये हैं कि सामान्य जन तो चुनावों में किसी पद हेतु प्रत्याशी के रूप में भाग लेने की बात भी नहीं सोच सकते। धन के आधार पर चुनाव लड़ना प्रजातांत्रिक प्रणालियों में एक आम बात हो गई है। चुनाव लड़ रहे प्रत्याशी प्रचार-प्रसार में अत्यधिक धन व्यय करते हैं। इससे 'जनता का शासन' सहज ही 'धनिकों के शासन' में परिवर्तित होता जा रहा है।

दलीय गुटबन्दी : वर्तमान प्रजातंत्र के संचालन के लिए राजनीतिक दल अनिवार्य हो गये हैं। राजनीतिक दलों का गठन तो विचारों के आधार पर होता है किंतु सत्ता प्राप्ति ही इनका मुख्य लक्ष्य बन जाता है। जनता को प्रभावित करने व लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दल परस्पर एक दूसरे के विरुद्ध अर्नगल प्रलाप करते रहते हैं। 'विरोध के लिये' विरोध न कि 'मूल्य या सिद्धांतों' के आधार पर विरोध राजनीतिक दलों का लक्ष्य बन जाता है। राजनीतिक दल ऐसे लोगों का अखाड़ा बन जाते हैं जो गहन प्रचार द्वारा लोगों की भावनाओं को प्रभावित करके अपना वर्चस्व व स्वार्थ सिद्ध करने के उपाय खोजते रहते हैं। चुनाव के दौरान इनके अमर्यादित प्रचार-प्रसार के कारण संपूर्ण देश का वातावरण दूषित हो जाता है। लोक कल्याण के स्थान पर गुटीय हितपूर्ति महत्वपूर्ण हो जाती है तथा सत्ता का प्रयोग भी वे अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु करने लगते हैं।

युद्ध व संकट के समय निर्बल : युद्ध और संकट के समय अधिक शीघ्रतापूर्वक निर्णय लेने की आवश्यकता होती है किंतु प्रजातांत्रिक प्रणाली ऐसे समय में प्रभावहीन सिद्ध होती है। प्रजातंत्र में सत्ता के फैलाव के कारण निर्णय लेने तथा उसे क्रियान्वित करने में बहुत अधिक समय लगता है।

12.6 प्रजातंत्र का महत्व

प्रजातंत्र न केवल शासन का एक विशेष प्रकार है बल्कि यह जीवन के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण है। प्रजातंत्र स्वतंत्रता समानता, सहभागिता और बंधुत्व की भावना पर आधारित एक शासन व्यवस्था हैं। इसे हम एक सामाजिक व्यवस्था भी कह सकते हैं। इसके अन्तर्गत मनुष्य का संपूर्ण जीवन इस लोकतंत्रीय मान्यता पर आधारित होता है कि प्रत्येक व्यक्ति को समाज में समान महत्व एवं व्यक्तित्व की गरिमा प्राप्त है। व्यक्ति के महत्व की यह स्थिति जीवन के केवल राजनीतिक क्षेत्र में ही हो तो प्रजातंत्र अधूरा रहता है। प्रजातंत्र की पूर्णता के लिए यह आवश्यक है कि जीवन के राजनीतिक सामाजिक व आर्थिक तीनों ही क्षेत्रों में सभी व्यक्तियों को अपने विकास के समान अवसर प्राप्त हों।

मानव जीवन के राजनीतिक क्षेत्र में प्रजातंत्र से आशय ऐसी राजनीतिक व्यवस्था से है जिसमें निर्णय लेने की शक्ति किसी एक व्यक्ति में न होकर जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों में निहित होती है। अत: शासन जन भावना पर आधारित होता है।

मानव जीवन के सामाजिक क्षेत्र में प्रजातंत्र से आशय ऐसे समाज से हैं, जिसमें जाति, धर्म, रंग, लिंग, नस्ल, मूलवंश व सम्पत्ति आदि के आधार पर भेदभाव न हो। सभी को अपना जीवन उन्नत बनाने के अधिकार व अवसर बिना भेदभाव के समान रूप से प्राप्त हो तथा समाज में बंधुत्व तथा पारस्परिक सहयोग की भावना निहित हो।

मानव जीवन के आर्थिक क्षेत्र में प्रजातंत्र से आशय ऐसी व्यवस्था से है जिसमें समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आजीविका चुनने अथवा व्यवसाय करने की स्वतंत्रता प्राप्त है। सभी को अपना आर्थिक विकास करने की स्वतंत्रता व समान अवसर प्राप्त होते हैं। एक व्यक्ति का किसी अन्य द्वारा शोषण न हो ऐसी व्यवस्था के प्रयास होते हैं। सभी को वे सामान्य सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयास भी किया जाता है जिससे वे अपनी न्यूनतम आर्थिक आवश्यकताएँ पूर्ण कर सके एवं गरिमामय जीवन जी सके, अर्थात व्यक्ति को रोटी, कपड़ा, मकान, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार आदि की सुविधाएँ प्रजातंत्र के आधार हैं।

प्रजातांत्रिक व्यवस्था शासकों के व्यवस्थित एवं नियमित परिवर्तन में विश्वास करती हैं। प्रजातंत्र की यह मान्यता भी है कि राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में जो भी परिवर्तन किए जाने हो, उन सभी परिवर्तन को शांतिपूर्ण तरीकों से किया जा सकता है। राजनीतिक प्रक्रिया में जनता की भागीदारी अथवा सहभागिता सुनिश्चित करने वाली यही एक मात्र शासन प्रणाली है। अत: इसका महत्व अन्य शासन प्रणालियों से ज्यादा आँका जाता है।

प्रजातंत्र के लिए संविधान की आवश्यकता एवं महत्व

वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सरकार का निर्माण जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि करते हैं। प्रजातंत्र की मूल मान्यता है कि शासन की शक्तियों पर जनता का नियंत्रण हो जिससे शासन जनता के हितों के अनुकूल हो सके। जनता के अधिकारों की रक्षा के लिए कानूनों का होना अनिवार्य है। प्रजातंत्र में सामान्य व्यक्तियों को सरकार के गठन की प्रक्रिया व शक्तियों तथा नागरिकों के अधिकारों व कर्त्तव्यों का ज्ञान संविधान के द्वारा सरलता से प्राप्त हो सकता है। संविधान को आसानी से बदला ना जा सके, ऐसी व्यवस्था भी होनी चाहिए। इस प्रकार प्रजातंत्र की रक्षा के लिए लिखित संविधान का होना आवश्यक है। प्रजातंत्र को इसीलिए विधि का शासन कहा जाता है। इसमें व्यक्ति या व्यक्ति समूह नहीं वरन् कानून सर्वोपरि है, जो लिखित संविधान में स्पष्ट होता है। अत: प्रजातंत्र के लिए संविधान का अत्यधिक महत्व है। प्रजातंत्र की सुदृढ़ता के लिए प्रजातांत्रिक परंपराओं का भी महत्व है जो लिखित संविधान को लचीलापन देती हैं।

12.7 भारत में प्रजातंत्र

प्राचीन भारत में प्रजातंत्र का स्वरूप : प्रजातंत्र व प्रजातांत्रिक संस्थाओं के विचार भारत के लिए नए नहीं हैं। ऐसा माना जाता है कि लगभग 3000 ईसा पूर्व से 1000 ईसा पूर्व के वैदिक काल में भारत की जनता

के बीच प्रतिनिधिक विचार विमर्श की परंपरा विद्यमान थी। उत्तरवैदिक काल में शासन का गणतांत्रिक रूप एवं स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ विद्यमान थीं। ऋग्वेद व अथर्ववेद में **सभा** और **समिति** का उल्लेख मिलता है। महाभारत के युद्ध के बाद बड़े साम्राज्य लुप्त होने लगे और कई गणतांत्रिक राज्यों का उदय हुआ। महाजनपद काल में सोलह महाजनपद जन्मे जिनमें काशी, कोशल, मगध, कुरू, अंग, अवंति, गंधार, वैशाली, मत्स्य इत्यादि सम्मिलित थे। इनमें से कुछ महाजनपदों में राजतंत्र व अन्यों में गणतंत्र थे। महावीर और गौतम बुद्ध दोनों ही गणतंत्र से आए थे। तत्कालीन बौद्ध भिक्षु संघ के कई नियम आधुनिक संसदीय शासन प्रणाली के नियमों से बहुत अधिक मिलते हैं। जैसे बैठक व्यवस्था, विभिन्न प्रकार के प्रस्ताव, ध्यानाकर्षण, गणपूर्ति (कोरम), व्हिप, वोटों की गिनती, रोक प्रस्ताव, न्याय संबंधी विचार आदि। वज्जि संघ में तो सभी लोग एक साथ एकत्रित होकर अपनी सभाएँ करते थे। यह प्रत्यक्ष प्रजातंत्र का रूप था। बज्जि संघ छः गणराज्यों से मिलकर बना था। मौर्यकालीन भारत में ग्रामों और नगरों में स्वशासन की व्यापक व्यवस्था थी। भारतीय समाज कृषि प्रधान था जिसकी मूल इकाई स्वशासित एवं स्वतंत्र ग्राम थे। राजनीतिक ढाँचा इन्हीं ग्राम समुदायों की ईकाइयों पर आधारित था। गाँवों का शासन चुनी गई पंचायत चलाती थी । गाँव के केन्द्र में पंचायत घर हुआ करता था, जहाँ बड़े-बूढ़े मिला करते थे। प्रत्येक वर्ष गाँव के सभी सदस्य मिलकर पंचायत का चुनाव किया करते थे। इन निर्वाचित ग्राम पंचायतों को गाँव के मामलों में पूरा अधिकार तथा न्याय करने का अधिकार भी प्राप्त था। पंचायतें ही जमीन का बँटवारा करती और कर एकत्रित करके गाँव की ओर से सरकार को भी देती थी। पंचायत के चुने हुए सदस्यों से कुछ समितियों का निर्माण किया जाता और प्रत्येक समिति एक वर्ष के लिए बनाई जाती थी। यदि कोई सदस्य दुर्व्यवहार करे तो उसे तुरंत हटाया जा सकता था। यदि कोई सदस्य जन कोष का उचित लेखा-जोखा पेश न करें तो उसे अयोग्य घोषित कर दिया जाता था। केन्द्रीय स्तर पर राजा का शासन था। राजा को यूरोप की भांति दैवी शक्ति का निरंकुश अधिकार नहीं था और यदि राजा दुर्व्यवहार करें तो प्रजा को उसे हटाने का भी अधिकार था। राजा को सलाह देने के लिए राज्य परिषद् हुआ करती थी। राजा प्रजा की इच्छा के अनुसार ही कार्य करता था और राजा के सलाहकार (मंत्री/अधिकारी) स्थानीय स्तर के पंचों का सम्मान करते थे । अतः प्राचीन भारत में राजा के शासन का उद्देश्य प्रजा की सेवा करना था ।

ब्रिटिश शासन काल में प्रजातांत्रिक संस्थाएँ : ब्रिटिश शासन द्वारा समय-समय पर भारतीयों को सीमित शक्तियाँ देने के प्रयास किए गए। इस हेतु ब्रिटिश संसद द्वारा पारित अधिनियम एवं भारत में ब्रिटिश शासन द्वारा बनाए गए कानून वर्तमान भारतीय प्रजातंत्र की आंशिक **पूर्वपीठिका** कही जा सकती है। भारतीय समाज की प्राचीन ऐतिहासिक विरासत, एवं संस्कृति में प्रजातांत्रिक मूल्यों का पूर्व से ही व्यवहार था अतः ब्रिटिश शासन काल की वैधानिक व्यवस्थाएँ भारतीय जनता द्वारा आसानी से मान्य की गई। यद्यपि उनमें प्रजातंत्र का औपचारिक रूप ही विद्यमान था, तथापि वह वर्तमान प्रजातंत्र का आरंभिक रूप कहा जा सकता है। सन् 1858, 1861 एवं 1892 में उपर्युक्त व्यवस्थाऐं स्थानीय शासन तक सीमित थी। सन् 1909, 1919 एवं 1935 के अधिनियमों का वर्तमान प्रजातंत्र की संसदीय प्रणाली के विकास में प्रमुख योगदान रहा।

वर्तमान में भारतीय प्रजातंत्र

वर्तमान में भारत विश्व का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश है। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भारतीय संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। संविधान लागू होते ही भारत एक सार्वभौम प्रजातांत्रिक गणतंत्र बन गया। संविधान द्वारा प्रजातंत्र के आधारभूत सिद्धांत के अनुरूप नागरिकों को सार्वभौम वयस्क मताधिकार दिया गया। समस्त वयस्क भारतीय नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के मताधिकार प्रदान किया गया जिसके आधार पर जनता अपनी इच्छानुसार प्रतिनिधियों का चुनाव कर लोकप्रिय सरकार का निर्माण कर सके।

आज तक संपन्न हुए विभिन्न लोकसभा और विधानसभा चुनावों में भारतीय नागरिकों के द्वारा सक्रिय सहभागिता एवं परिपक्वता का परिचय दिया गया है। आपातकाल (1975-1977) के अपवाद को छोड़कर समयबद्ध व निष्पक्ष चुनावों का संपन्न होना, भारतीय प्रजातंत्र की निरतंरता का सूचक है। इसके अतिरिक्त स्थानीय स्तर पर

ग्रामीण क्षेत्रों में संपन्न होने वाले पंचायतों, एवं नगरीय क्षेत्रों में नगरीय निकायों के चुनाव भी भारतीय प्रजातंत्र की व्यापकता का प्रमाण है।

भारत में प्रजातंत्र के मार्ग में कुछ चुनौतियाँ भी है। भारतीय प्रजातंत्र आज अशिक्षा, जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद, पृथकतावाद, सांप्रदायिकता, राजनीतिक हिंसा, सामाजिक-आर्थिक असमानता, धन व बाहुबल के वर्चस्व, भ्रष्टाचार और वोट बैंक की राजनीति की समस्याओं से प्रभावित हो रहा है।

सामाजिक-आर्थिक असमानता को दूर कर शिक्षा का प्रसार व नैतिक मूल्यों की स्थापना द्वारा इन समस्याओं से भारतीय प्रजातंत्र को मुक्त कराया जा सकता है। भारतीय जनमानस की प्रजातंत्र के प्रति प्रतिबद्धता है, यह विभिन्न समयबद्ध निर्वाचन व समय-समय पर संवैधानिक साधनों द्वारा आसानी से होने वाले सत्ता परिवर्तनों से स्पष्ट है। अतः भारत में प्रजातंत्र शासन की निरंतरता एवं सफलता की आशा की जा सकती है।

शब्दावली

सम्प्रभुता : राज्य की सर्वोच्च सत्ता।

सम्प्रभू : समाज के समस्त लोग चाहे वे किसी भी जाति, सम्प्रदाय, लिंग, भाषा व क्षेत्र के हों, सर्वोच्च सत्ता के स्वामी हैं।

राज्य : निश्चित भू-भाग, जनसंख्या, सरकार और संप्रभुता से निर्मित समूह राज्य कहलाता है।

कैंटन : स्विट्जरलैण्ड के राजनैतिक या प्रशासनिक प्रान्त/ईकाई।

साम्यवाद : यह एक विचारधारा है, जिसका मुख्य उद्देश्य समाज में आर्थिक समानता स्थापित करना है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की प्रारंभिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

अभिजन : लोगों का ऐसा समूह, जो समाज में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाए हुए है। इस शब्द का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों के नेतृत्वों के लिए भी किया जाता है, जैसे राजनीतिक अभिजन।

गणराज्य : शासन का प्रमुख, लोगों द्वारा चुना हुआ व्यक्ति होगा न कि किसी वंश या राजवंश का।

पूर्व पीठिका : आरंभिक पृष्ठभूमि।

साध्य : उद्देश्य, जैसे राज्य का उद्देश्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही विकल्प चुनकर लिखिए-

1. निम्नलिखित में से कौनसी विशेषता लोकतंत्र की नहीं है-
   (i) निर्वाचित प्रतिनिधियों की सरकार (ii) अधिकारों का सम्मान
   (iii) शक्तियों का एक व्यक्ति में केन्द्रीकरण (iv) स्वतंत्रता और निष्पक्ष चुनाव
2. कौनसी अवधारणा प्रजातंत्र की है -
   (i) स्वतंत्रता (ii) शोषण
   (iii) असमानता (iv) व्यक्तिवादिता

3. निम्नलिखित में से कौनसा प्रजातंत्र का दोष नहीं है–

(i) सार्वजनिक धन व समय का अपव्यय (ii) धनिकों का वर्चस्व

(iii) दलीय गुटबन्दी (iv) लोक कल्याण

4. प्रजातंत्र, जनता का जनता के लिये जनता द्वारा संचालित शासन है–

(i) मैकियावली (ii) रूसो

(iii) लिंकन (iv) हाट्स

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. अरस्तु ने प्रजातंत्र को ..... का शासन कहा है।
2. साम्यवाद के प्रर्वतक ..... और .....थे।
3. सफल प्रजातंत्र के लिए संविधान का ..... होना आवश्यक है।
4. निर्बल प्रजातंत्र ..... और ..... के समय प्रभावहीन सिद्ध होता है।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न-

1. उत्तर वैदिक काल में प्रजातांत्रिक संदर्भ में किसका उल्लेख पाया जाता है?
2. प्राचीन भारत में शासन की मूल इकाई के रूप में किस प्रकार की व्यवस्था थी?
3. प्रजातंत्र का मार्क्सवादी सिद्धांत किस अधिकार पर बल देता है?

लघुउत्तरीय प्रश्न -

1. प्रजातंत्र का अर्थ समझाते हुए कोई दो परिभाषाएँ लिखिए।
2. अप्रत्यक्ष अथवा प्रतिनिधि प्रजातंत्र से आप क्या समझते हैं?
3. प्रजातंत्र में राजनीतिक शिक्षण कैसे होता है?
4. प्रजातंत्र के लिये संविधान क्यों आवश्यक है, इस पर एक टिप्पणी लिखे।
5. वर्तमान में भारतीय प्रजातंत्र किन-किन चुनौतियों से गुजर रहा है, लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न-

1. प्रजातंत्र से क्या आशय है? इसकी प्रमुख विशेषताएँ बतलाइए।
2. प्रजातंत्र के गुण-दोषों का वर्णन कीजिए।
3. प्रजातंत्र के आधारभूत सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।
4. भारत में प्रजातंत्र के महत्व एवं स्वरूप का वर्णन कीजिए।
5. प्रजातंत्र की अवधारणा क्या है? वर्तमान भारतीय प्रजातंत्र के स्वरूप का वर्णन कीजिए।

प्रायोजना कार्य

- आपकी शाला के छात्र संघ चुनावों से संबंधित जानकारी प्राप्त करें। कक्षा प्रतिनिधि तथा छात्र संघ के चुनाव में जिस प्रक्रिया तथा पद्धति का प्रयोग किया गया है, लिखें। समस्त प्रतिनिधियों तथा पदाधिकारियों का सुन्दर चार्ट बनाइए।
- अपने गाँव की पंचायत के चुनाव की जानकारी प्राप्त कर विजयी प्रत्याशी और पराजित प्रत्याशी के वोट की गिनती कर चार्ट बनाएँ तथा पंचायत की चुनाव प्रक्रिया व ग्राम के लोगों की भूमिका को लिखें।

❖❖ ★★ ❖❖

अध्याय - 13

निर्वाचन

हम पढ़ेंगे

13.1 निर्वाचन से आशय एवं आवश्यकता।
13.2 मताधिकार एवं मताधिकार प्राप्त करने की शर्तें।
13.3 राजनीतिक दलीय व्यवस्था, विशेषताएँ, कार्य व उसके प्रकार।
13.4 भारत के राजनैतिक दल, महत्व व विपक्ष की भूमिका।
13.5 भारतीय निर्वाचन प्रक्रिया।
13.6 निर्वाचन आयोग व उसके कार्य।

13.1 निर्वाचन से आशय एवं आवश्यकता

हमारे देश में संसदीय शासन प्रणाली है। इस शासन प्रणाली में देश के निर्वाचित प्रतिनिधियों से सरकार बनाई जाती है। निर्वाचन के द्वारा नागरिकों की शासन में भागीदारी होती है। नागरिकों द्वारा अपने प्रतिनिधि निर्वाचित करने की प्रक्रिया **निर्वाचन** कहलाती है। निर्वाचन के द्वारा एक निश्चित समय के लिये प्रतिनिधियों का चयन किया जाता है। हमारे देश के नागरिक निर्वाचन में भाग लेकर अपने राजनीतिक अधिकार का प्रयोग करते हैं। भारत एक विशाल और बहुभाषी देश है। हमारे यहाँ सभी नागरिकों को समान रूप से चुनाव में भाग लेने तथा अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है। मताधिकार की यह प्रणाली सार्वजनिक वयस्क मताधिकार प्रणाली कहलाती है। 18 वर्ष की आयु प्राप्त वे सभी नागरिक जिनके नाम निर्वाचन नामावली में होते हैं, मत देने का अधिकार रखते हैं।

भारत में मतदान की गोपनीय प्रणाली को अपनाया गया है। भारत में स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव सम्पन्न कराने के लिये निर्वाचन आयोग बनाया गया है।

लोकतांत्रिक देशों में जनता द्वारा एक निश्चित अवधि के लिये प्रतिनिधि चुनने की प्रक्रिया को निर्वाचन कहते हैं।

13.2 मताधिकार

भारतीय संविधान की उद्देश्यिका से यह ज्ञात होता है कि जनता में सम्प्रभुता का समावेश है। जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अपनी सम्प्रभुता का प्रयोग करती है। सरकार की सभी शक्तियों का स्त्रोत जनता होती है। नागरिक अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार रखते हैं। शासन का प्रबन्ध जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से होता है। नागरिकों का प्रतिनिधि चुनने का अधिकार **मताधिकार** कहलाता है। यह अधिकार महत्वपूर्ण राजनीतिक अधिकार है। आज लोकतंत्र का युग है, जिन देशों में लोकतंत्र पर आधारित शासन नहीं है वहां की जनता भी इसे चाहती है। हमारे देश में सभी वयस्क नागरिकों को मताधिकार प्राप्त है। मताधिकार की यह प्रणाली **सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार प्रणाली** कहलाती है।

सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार

देश के प्रत्येक वयस्क महिला तथा पुरुष को बिना किसी भेदभाव के मत देने का अधिकार सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार कहलाता है। इस प्रणाली में एक निर्धारित उम्र पार करने के उपरांत देश के सभी पात्र नागरिकों को वोट देने का अधिकार प्राप्त हो जाता है।

हमारे देश में वे सभी स्त्री-पुरुष जिनकी उम्र 18 वर्ष है वोट डालने के अधिकारी है। लेकिन यह ध्यान

में रखने कि बात है कि वोट डालने का अधिकार केवल अधिकार नहीं बल्कि एक कर्तव्य भी है। मानसिक रूप से विकलांग या पागल या ऐसे व्यक्ति जो न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित हैं अथवा ऐसे व्यक्ति जो भारत देश के नागरिक नहीं हैं, मत देने के अधिकारी नहीं होते।

हमारे संविधान निर्माण के समय दुनिया के कुछ देशों में वहां के नागरिकों को सीमित मताधिकार था। परन्तु हमारे संविधान निर्माताओं ने सभी वयस्क नागरिकों को बिना भेदभाव के मताधिकार प्रदान करने का निश्चय किया था। 17 नवम्बर 1949 को संविधान सभा में कहा गया कि :

''बिना सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के लोकतंत्र का कोई अर्थ नहीं है।''

हमारे संविधान की अनुपम देन मताधिकार है। इस व्यवस्था के अनेक लाभ हैं। इसकी विशेषतायें निम्नलिखित हैं –

1. प्रत्येक व्यक्ति के मत को समान महत्व मिलता है।
2. यह व्यवस्था समानता के सिद्धान्त के अनुकूल है।
3. सभी नागरिक शासन में भागीदारी करते हैं।
4. शासन के लोगों का शांतिपूर्वक परिवर्तन सम्भव हैं।
5. नागरिकों को राजनीतिक शिक्षा मिलती है।
6. नागरिकों में आत्म सम्मान की भावना पैदा होती है।

लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के लिए यह एक गंभीर प्रश्न है कि मताधिकार का आधार क्या हो? क्या यह अधिकार राज्य के सभी नागरिकों को दिया जाए अथवा कुछ चुने हुए व्यक्तियों को? इस संदर्भ में मताधिकार के निम्न सिद्धान्त है–

(1) जनजातीय सिद्धांत
(2) सामन्ती सिद्धांत
(3) प्राकृतिक सिद्धांत
(4) वैधानिक सिद्धांत
(5) नैतिक सिद्धांत
(6) सर्वव्यापी वयस्क मताधिकार का सिद्धांत
(7) बहुल मताधिकार का सिद्धांत
(8) भारीकृत मताधिकार का सिद्धांत

जनजातीय सिद्धांत : इसके अनुसार राज्य के प्रत्येक व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त होना चाहिए। क्योंकि यह कोई विशेष अधिकार या सुविधा नही है वरन् यह प्रत्येक नागरिक के जीवन को प्रभावित करने वाला स्वाभाविक एवं सक्रिय हिस्सा है। यह विचार प्राचीन यूनान रोम तथा कतिपय अन्य छोटे राष्ट्रों की सभाओं में प्रचलित था, जहाँ हाथ उठाकर मतदान किया जाता था। आधुनिक युग में मताधिकार के लिए नागरिकता की अनिवार्यता संभवत: इसी का प्रतिरूप है।

सामन्ती सिद्धांत : इस सिद्धांत के अनुसार केवल उन्हीं लोगों को मताधिकार रहता है, जिनके पास सम्पत्ति हो। यह विचार मध्ययुग में विशेषरूप से प्रचलित था जब मताधिकार को सम्मान का प्रतीक माना जाता था। आधुनिक युग में अनेक राष्ट्रों में मताधिकार के लिए सम्पत्ति की अनिवार्यता इसी विचार पर आधारित है।

प्राकृतिक सिद्धांत : इस सिद्धांत के अनुसार सरकार मनुष्य निर्मित संयत्र है। इसका आधार जनता की सहमति है। अतएव शासक को चुनने का अधिकार जनता का प्राकृतिक अधिकार है। 17 वीं तथा 18 वीं शताब्दी में यह विचार विशेष लोकप्रिय हुआ।

वैधानिक सिद्धांत : इस सिद्धांत के अनुसार मताधिकार एक प्राकृतिक अधिकार नहीं वरन् राजनीतिक अधिकार है। यह निर्धारण करना राज्य का कार्य है कि किसे मताधिकार मिलना चाहिए। प्रत्येक सरकार अपनी परिस्थितियों और सामाजिक स्थिति के आधार पर इसका निर्धारण करती है।

नैतिक सिद्धांत : इस सिद्धांत के अनुसार मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए यह आवश्यक है कि उसे मताधिकार के माध्यम से यह निश्चित करने का अधिकार हो कि उनका शासन कौन करें। मताधिकार व्यक्ति

में राजनीतिक संवेदनशीलता को जन्म देता है तथा उसे सरकारी नीतियों तथा कार्यक्रमों के प्रति चैतन्य बनाता है।

सर्वव्यापी वयस्क मताधिकार का सिद्धांत : यह सिद्धांत लोकतांत्रिक राज्यों में सर्वाधिक प्रचलित सिद्धांत है। इसके अनुसार राज्य के प्रत्येक वयस्क नागरिक को बिना किसी भेदभाव के मत देने का अधिकार होता है। 17 वीं तथा 18 वीं शताब्दी में प्राकृतिक अधिकारों और जनसंप्रभुता के वातावरण में सर्वव्यापक मताधिकार की माँग ने जोर पकड़ा। इसमें वयस्कता का अधिकार सम्मिलित किया गया। वयस्कता की आयु अमेरिका, ब्रिटेन, रूस और भारत में 18 वर्ष है। आस्ट्रेलिया में तो सरकार मताधिकार के प्रयोग को अनिवार्य घोषित कर सकती है और समुचित कारणों के अभाव में मताधिकार का प्रयोग न करने वाले को दण्डित भी कर सकती है। अधिकतर राज्यों में वयस्क मताधिकार प्रणाली से मतदान होता है अत: इस प्रणाली के गुण, दोषों को जानना भी आवश्यक है।

गुण :

- चूंकि लोकतंत्र का अर्थ प्रत्येक व्यक्ति की शासन में सहभागिता है, तो यह वांछनीय है कि मताधिकार सर्वव्यापक हो। जन-जन की शासन में सहभागिता ही लोकतंत्र की प्राणशक्ति है।
- जिसका सम्बन्ध सब से हो, ऐसे व्यक्ति को अपना प्रतिनिधि बनाने में सबका हाथ होना चाहिए।
- मताधिकार समानता के सिद्धांत के अनुरूप है जो लोकतंत्र का मूलरूप है।
- जब तक मताधिकार सर्वव्यापी नहीं होगा तब तक यह आशा नही की जा सकती कि शासन का उद्देश्य सार्वजनिक हितों की प्राप्ति है।

दोष :

- मैकाले, हेनरीसेन जैसे विचारकों का मत है कि इसमें अशिक्षित और नासमझ व्यक्तियों को भी मताधिकार प्राप्त हो जाता है।
- यह कहा जाता है कि जनता के बड़े भाग को मताधिकार प्राप्त नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे राजनीतिक अस्थिरता बढ़ती है।

बहुल मताधिकार का सिद्धांत : आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में 'एक व्यक्ति एक मत' का सिद्धांत सर्व-स्वीकृत है परन्तु विगत वर्षो में बहुल मताधिकार की व्यवस्था भी अनेक राज्यों में प्रचलित रही है। मताधिकार के इस सिद्धांत की मूल अवधारणा में यह आग्रह है कि व्यक्तियों के मतों की संख्या कुछ आधारों पर कम या अधिक होनी चाहिए।

भारीकृत मताधिकार का सिद्धांत : इसमें मतों को गिना नहीं जाता है वरन् उनका भार दिया जाता है। भार का अर्थ यहाँ महत्व से है अर्थात सरकार के चयन में किसी भी प्रकार की विशिष्टता जैसे शिक्षा, धन या सम्पत्ति से विभूषित व्यक्ति के मत का भार एक आम आदमी से अधिक होना चाहिए।

13.3 राजनीतिक दलीय व्यवस्था

संसदीय लोकतंत्र के लिए विभिन्न राजनीतिक दल आवश्यक हैं। राजनीतिक दल नागरिकों के संगठित समूह हैं, जो एक सी विचारधारा रखते हैं। ये अपनी नीतियों और कार्यक्रमों के लिये प्रतिबद्ध होते हैं। राजनीतिक दल एक शक्ति के रूप में कार्य करते हैं और सदैव शक्ति प्राप्त करने और उसे बनाये रखने का प्रयास करते रहते हैं। राजनीतिक दलों में कुछ सामान्य विशेषतायें होती हैं।

राजनीतिक दलों के कार्य

राजनीतिक दल अनेक कार्य करते हैं। इनके प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

राजनीतिक दलों की विशेषताएँ

- स्पष्ट पहचान रखना।
- नीतिगत विषयों में स्पष्ट राय होना।
- विचारों के सर्मथन में निरंतर जनमत बनाना।
- एक विधान द्वारा संगठित और संचालित होना।
- निर्वाचन आयोग में पंजीकृत होना।
- प्रमुख उद्देश्य निर्वाचन में विजय प्राप्त कर सत्ता प्राप्त करना।
- शासन दल पर निगाह रखते हुए जनविरोधी नीतियों के विरूद्ध जनमत बनाना।
- पहचान हेतु एक चुनाव चिन्ह होना।

1. ये सरकार और जनता के मध्य सेतु का कार्य करते हैं।
2. ये राष्ट्र हित के अनुकूल जनमत बनाते हैं।
3. निर्वाचन के समय प्रत्याशियों का चयन करते हैं।
4. शासक दल की निरंकुशता पर रोक लगाने का प्रयास करते हैं।
5. निर्वाचन में विजय प्राप्त करना और सरकार बनाना इनका प्रमुख कार्य है।
6. मतदाता सूची बनवाने में यह सहयोग करते हैं।
7. जनता को राजनीतिक प्रशिक्षण देते हैं।
8. ये सामाजिक और आर्थिक कार्य भी करते हैं।

दलीय व्यवस्था के प्रकार

किसी देश में राजनीतिक दलों की संख्या के आधार पर दल व्यवस्था को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है।

अ. एकल दल (एक दलीय) प्रणाली – यदि किसी देश में एक ही राजनीतिक दल होता है तो वह एकल दल प्रणाली कहलाती हैं, एक दल वाले देशों के संविधान में प्राय: उस राजनीतिक दल का उल्लेख होता है। जैसे – जनवादी चीन में एकदलीय प्रणाली है, वहां केवल साम्यवादी दल को ही मान्यता है अन्य राजनैतिक विचार रखने वाले पर पाबंदी है।

ब. द्वि दलीय प्रणाली – किसी देश में दो प्रधान दल होते हैं और सत्ता इन्ही दो दलों के बीच आती जाती रहती है। यह प्रणाली द्विदलीय प्रणाली कहलाती है जैसे– अमेरिका में डेमोक्रेटिक दल और रिपब्लिकन दल प्रमुख है ब्रिटेन में अनुदारवादी व श्रमिक दल प्रमुख हैं। इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन की शासन व्यवस्था में द्विदलीय प्रणाली प्रचलित है।

स. बहु दलीय प्रणाली – जब देश में अनेक राजनीतिक दल होते हैं तब उस प्रणाली को बहुदलीय प्रणाली कहा जाता है। भारत में अनेक राजनीतिक दल हैं। हमारे देश में बहुदलीय राजनीतिक प्रणाली है। निर्वाचन में किसी एक दल का बहुमत आना आवश्यक नहीं है।

साझा सरकार

किसी एक दल का बहुमत न आने पर जब कई दल मिलकर सरकार बनाते हैं तब वह सरकार साझा सरकार कहलाती है। इसे गठबन्धन सरकार भी कहते हैं।

जब किसी एक दल का बहुमत नहीं आता है तो देश या प्रान्त में साझा सरकार बनाई जाती है। साझा अथवा गठबन्धन सरकार में 2 या अधिक दल शामिल होते हैं।

बहुदलीय प्रणाली में दल–बदल एक प्रमुख बुराई है। चुनावों के समय अनेक प्रकार की कठिनाईयाँ आती हैं। इस प्रणाली में राजनीतिक दलों की नीतियों में स्पष्ट अंतर करना कठिन हो जाता है। बहुदलीय प्रणाली में व्यक्तिनिष्ठ दलों की संख्या बढ़ जाती है। राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं से राजनीतिक दल टूटने लगते हैं और नये दल बनने लगते हैं।

13.4 भारत में राजनीतिक दल, महत्व व विपक्ष की भूमिका

भारत में कुछ प्रमुख राजनीतिक दलों का जन्म आजादी से पहले हो गया था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में निर्वाचन आयोग बनाया गया है। यह भारत में राजनीतिक दलों को पंजीकृत करता है तथा मान्यता देता है। भारत के राजनीतिक दल तीन प्रकार के हैं।

1. राष्ट्रीय राजनीतिक दल

वर्ष 2004 में हुये लोकसभा निर्वाचन के समय 6 राजनीतिक दल, राष्ट्रीय राजनीतिक दल के रूप में मान्यता प्राप्त थे। यह दल इस प्रकार हैं– 1. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस 2. भारतीय जनता पार्टी 3. बहुजन समाज पार्टी 4. कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इन्डिया 5. कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इन्डिया (मार्क्सवादी) 6. राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी। इस प्रकार के राजनीतिक दलों का चुनाव चिह्न सारे देश में एक ही होता है। किसी राजनीतिक दल का राष्ट्रीय दल होने का अर्थ यह नहीं है कि वह सारे देश में समान रूप से लोकप्रिय है। राष्ट्रीय दलों का प्रभाव भी अलग-अलग प्रांतों में भिन्न-भिन्न हो सकता है। किसी राजनीतिक दल को राष्ट्रीय दल की मान्यता प्राप्त होने के लिये निम्न शर्त में से कोई एक का होना आवश्यक है–

जो दल एक या एक से अधिक राज्यों में लोकसभा या विधानसभा के चुनावों में डाले गये मतों का कम से कम 6 प्रतिशत मत प्राप्त करे अथवा यदि कोई दल लोक सभा के सदस्यों का कम से कम 2 प्रतिशत स्थान प्राप्त करें और यह स्थान न्यूनतम तीन राज्यों में होना चाहिये।

2. राज्य स्तरीय राजनीतिक दल

विगत लोक सभा निर्वाचन में राज्य स्तरीय 36 राजनैतिक दल थे। इस प्रकार के दलों को एक या अधिक राज्यों के लिये मान्यता होती हैं। इन राज्यों में इनका चुनाव चिह्न आरक्षित होता है। उदाहरण के लिये पंजाब में अकाली दल, आन्ध्रप्रदेश में तेलगू देशम पार्टी राज्य स्तरीय राजनीतिक दल हैं। यदि कोई दल लोकसभा या संबंधित राज्य विधान सभा चुनावों में 6 प्रतिशत वोट प्राप्त कर लेता है अथवा विधान सभा में 3 स्थान प्राप्त कर लेता है, तब वह दल राज्य स्तरीय दल की मान्यता प्राप्त कर लेता है, राज्य स्तरीय दल क्षेत्रीय दल के नाम से विख्यात हैं।

3. पंजीकृत राजनीतिक दल

निर्वाचन आयोग में 750 से अधिक पंजीकृत दल हैं। उदाहरण के लिये गौंडवाना गणतन्त्र पार्टी, भारतीय जनशक्ति पार्टी पंजीकृत राजनीतिक दल हैं। पंजीकृत दलों को निर्वाचन के समय रेडियो और दूरदर्शन पर समय नहीं मिलता है। पूरे प्रदेश के लिये उनका चुनाव चिह्न आरक्षित नहीं होता है। इनका प्रभाव एक सीमित क्षेत्र में होता है कई पंजीकृत दल उनकी आवश्यकतानुसार एक दूसरे में विलय कर लेते हैं या मतभेद होने पर अपना अलग दल भी बना लेते हैं। इस प्रकार के दल प्राय: दल के अध्यक्ष की इच्छा और प्रभाव का परिणाम होते हैं।

दलीय व्यवस्था का महत्व

दलीय व्यवस्था प्रजातान्त्रिक शासन को सम्भव बनाती है। आधुनिक युग में शासन कार्य राजनीतिक दलों के सहयोग से होता है। यह शासन को नीति बनाने में सहयोग करते हैं साथ ही इनके सहयोग से नीतियों में बदलाव आसान होता है। दल व्यवस्था के प्रभाव से सरकार जनोन्मुखी होती है व लोकहित के कार्य करती है। राजनैतिक दल शासन की निरंकुशता पर रोक लगाते हैं। इनसे जनता की आशायें और अपेक्षायें सरकार तक पहुंचती हैं। यह जनता को राजनीतिक प्रशिक्षण देते हैं। इनके माध्यम से सभी को शासन में भाग लेने का अवसर मिलता है। राजनीतिक दल नागरिक स्वतंत्रताओं के रक्षक होते हैं। इनके द्वारा राष्ट्र की एकता स्थापित होती है।

राजनीतिक दलों का महत्व

लोकतंत्र में राजनीतिक दलों के महत्व को निम्नलिखित रूपों में स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) प्रजातंत्र में लोकमत का निर्माण तथा उसकी अभिव्यक्ति राजनीतिक दलों द्वारा ही संभव है। लोकतंत्र का निर्माण करने के लिए राजनीतिक दल जुलूस एवं अधिवेशन आदि आयोजित करते हैं।

(2) वर्तमान में विश्व के सभी देशों में वयस्क मताधिकार को अपनाया गया है। राजनीतिक दल अपने दल की

ओर से उम्मीदवारों को चुनाव में खड़ा करते हैं तथा उनके पक्ष में प्रचार करते हैं। आज के विशाल लोकतांत्रिक राज्यों में चुनावों का संचालन करने के लिए राजनीतिक दलों का होना अति आवश्यक है।

(3) लोकतांत्रिक शासन में जनता के सभी वर्गों को प्रतिनिधित्व राजनीतिक दलों द्वारा ही प्रदान किया जाता है।

(4) संसदीय तथा अध्यक्षात्मक दोनों ही प्रकार की शासन व्यवस्थाओं में निर्वाचन के बाद सरकार का गठन राजनीतिक दलों द्वारा ही किया जा सकता है।

(5) लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में प्रभावशाली विरोधी दल का होना भी अति आवश्यक है। लोकतंत्र में अल्पमत या विपक्षी दल का भी बहुमत प्राप्त दल के समान ही महत्व होता है।

विपक्ष की भूमिका

आम चुनाव के पश्चात् राजनीतिक दलों में से बहुमत प्राप्त दल या दलों का गठबंधन सरकार का निर्माण करता हैं अथवा सत्तारूढ़ होता हैं बहुमत प्राप्त न करने वाला/वाले दल **विपक्षी दल** कहलाते हैं। बहुमत प्राप्त दल से सरकार का गठन होता है। विपक्षी दल सरकार के कार्यों पर निगाह रखते हैं। संसदीय लोकतंत्र में शासक दल के कार्यों पर जनता सीधे नियन्त्रण नहीं करती है। विपक्षी दल ही इस उद्देश्य को पूरा करते हैं। संसदीय लोकतंत्र पर आधारित हमारे देश में सत्तारूढ़ दल और विपक्षी दल दोनों का महत्व है।

संसद और विधान मण्डलों में विपक्षी दल की सक्रियता से सरकार सजग होकर लोककल्याणकारी कार्य सजगता से करने को बाध्य रहती है। विपक्षी दल संसद और विधान सभाओं में सरकार की आलोचना भी करते हैं और नवीन नीतियों तथा कार्यों के सुझाव भी देते हैं।

विपक्ष की उपस्थिति से सरकार जनता के प्रति अधिक सजगता से अपने दायित्वों का निर्वहन करती है। विधायिका में कोई भी कानून पारित होने से पूर्व उस पर विचार विमर्श और चर्चा होती है। विपक्ष के सहयोग से कानून के दोषों को दूर किया जा सकता है। विधान मण्डल और संसद की बैठकों के समय विपक्ष की भूमिका और बढ़ जाती है। विपक्ष सदन में प्रश्न पूछकर या स्थगन प्रस्ताव लाकर सरकार पर दबाव बनाता है। इस प्रकार विपक्ष जनता के सामने अपनी योग्यता को स्थापित करता है, विपक्ष सरकार की त्रुटियों को जनता के सामने लाता है, सरकार की नीतियों और कार्यों की आलोचना करके सरकार को भूल सुधार के लिये बाध्य किया जाता है। विपक्ष द्वारा अपने दायित्व का पालन करने से सरकार प्रभावित होती है।

13.5 भारतीय निर्वाचन प्रक्रिया

निर्वाचन एक महत्वपूर्ण कार्य है। यह एक निर्धारित विधि से होता है। आप भारत के भावी नागरिक हैं आपके लिये इसे जानना आवश्यक है। देश में होने वाले सामान्य निर्वाचन, मध्यावधि निर्वाचन या उप चुनाव या निर्वाचन, सभी में समान प्रक्रिया होती है। इस पूरी प्रक्रिया को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है –

1. **मतदाता सूची तैयार करना** – निर्वाचन का यह पहला चरण है जो सबसे महत्वपूर्ण है। जिला निर्वाचन कार्यालय निर्वाचन आयोग के निर्देशानुसार प्रत्येक निर्वाचन से पूर्व मतदाता सूची को तैयार करता है। कोई भी भारतीय नागरिक जिसकी आयु 18 वर्ष है इसमें अपना नाम सम्मिलित करवा सकता है। मतदाता पहचान पत्र भी जिला निर्वाचन कार्यालय द्वारा बनवाये जाते हैं। मतदाता पहचान पत्र के अभाव में नागरिक को अपनी पहचान के लिए अन्य कागजात लाना होते हैं।

2. **चुनाव की घोषणा** – प्रत्येक निर्वाचन प्रक्रिया का प्रारम्भ अधिसूचना जारी होने से होता है। लोकसभा के सामान्य, अथवा मध्यावधि अथवा उपचुनाव की अधिसूचना राष्ट्रपति द्वारा जारी की जाती है। विधान सभाओं के लिये अधिसूचना राज्यपाल द्वारा जारी की जाती है। अधिसूचना का प्रकाशन चुनाव आयोग से विचार-विमर्श के बाद राजपत्र में किया जाता है।

अधिसूचना जारी होने के उपरांत निर्वाचन आयोग द्वारा चुनाव कार्यक्रम घोषित किया जाता है। इसके साथ

ही राजनीतिक दलों के लिये आचार संहिता लागू हो जाती है।

3. निर्वाचन हेतु नामांकन - विभिन्न राजनीतिक दल अपने-अपने प्रत्याशियों को चुनाव में भाग लेने के लिये नाम तय करते हैं। जो व्यक्ति चुनाव में भाग लेना चाहते हैं वह निर्वाचन अधिकारी के सामने अपना नामांकन पत्र भर कर जमा करते हैं। निर्धारित तिथि में नामांकन पत्रों की जांच कर सूची घोषित की जाती है। निर्धारित अवधि में कोई भी प्रत्याशी अपना नाम वापस ले सकता है। नाम वापसी का समय समाप्त होने के उपरान्त प्रत्याशियों की अंतिम सूची जारी की जाती है।

4. चुनाव चिह्न - प्रत्येक मान्यता प्राप्त दल का चुनाव चिह्न सुनिश्चित होता है। दल के प्रत्याशी को उनके दल का चुनाव चिह्न दिया जाता है। निर्वाचन के समय मतपत्र पर प्रत्याशी के नाम के आगे उसका चुनाव चिह्न छपा होता है। भारत में एक बड़ी संख्या में मतदाता साक्षर नहीं है। अत: चुनाव चिह्न प्रत्याशी की पहचान कराने में सहायक होते हैं।

सामान्य निर्वाचन

अपने निर्धारित समय पर होने वाला निर्वाचन सामान्य निर्वाचन है।

मध्यावधि निर्वाचन

यदि लोक सभा अथवा राज्य विधान सभा को उसके कार्यकाल पूरा होने से पहले भंग कर दिया जाता है तो होने वाले चुनाव मध्यावधि चुनाव कहलाते हैं।

उप चुनाव

किसी क्षेत्र के प्रत्याशी की मृत्यु अथवा त्यागपत्र से रिक्त स्थान पर होने वाला चुनाव उप चुनाव कहलाता है।

5. चुनाव अभियान - चुनाव अभियान मतदान प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग है। चुनाव अभियान के द्वारा प्रत्येक उम्मीदवार अपने दल का कार्यक्रम या आगामी पाँच वर्षों में किये जाने वाले कार्यों के संबंध में घोषणा-पत्र जनता के सामने रखकर अपने-अपने तरीके से मतदाता को अपने पक्ष में करने का प्रयास करता है। राजनीतिक दल चुनाव घोषणा-पत्र जारी करते हैं, जिसमें उस राजनैतिक दल की नीतियाँ और कार्यक्रम होते हैं सभाएँ की जाती हैं, रैलियां निकाली जाती हैं। समाचार पत्र, पोस्टर, बैनर, पम्पलेट आदि का प्रयोग प्रचार कार्य में किया जाता है। अब रेडियो और दूरदर्शन पर भी राजनीतिक दलों को समय दिया जाता है। मतदान समाप्त होने के 48 घंटे पूर्व चुनाव प्रचार बंद कर दिया जाता है।

6. मतदान - प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र कई मतदान केन्द्रों में विभाजित होता है। प्रत्येक मतदाता के लिये मतदान केन्द्र निर्धारित होता है जहां जाकर वह मतदान के दिन अपना मत (वोट) देता है।

मतदाता की पहचान के लिये उसे फोटोयुक्त पहचान-पत्र दिया जाता है। यह पहचान पत्र मतदाता का फोटो पहचान पत्र कहलाता है। जिन मतदाताओं के पास फोटो पहचान पत्र नहीं होते वे अपना राशन कार्ड, ड्राइविंग लाइसेन्स अथवा पहचान से संबंधित अन्य दस्तावेज आदि के द्वारा अपनी पहचान स्थापित कर सकते हैं।

मतदान केन्द्र पर मतदान कराने के लिये एक पीठासीन अधिकारी (प्रिसाइडिंग ऑफीसर) व आवश्यकतानुसार मतदान अधिकारी (पोलिंग ऑफीसर) होते हैं। मतदान के दिन मतदाता अपने मतदान केन्द्र पर आते हैं और लाइन में क्रम से खड़े हो जाते हैं। मत देने से पहले मतदाता की पहचान की जाती है कि वह सही मतदाता है। इसके बाद मत देने आये मतदाता से मतदाता सूची पर उसके हस्ताक्षर/अंगूठा निशानी लगवाई जाती है (मशीन से मतदान के समय) मतपत्र के द्वारा मतदान के समय मतपत्र के प्रतिपर्ण (काउन्टर फाइल) पर मतदाता के हस्ताक्षर/अंगूठा निशानी लगवायी जाती है।

अमिट स्याही लगवाने के उपरांन्त वह वोट दे सकता है। वोट दो प्रकार से दिया जाता है। 1. इलेक्ट्रोनिक वोटिंग मशीन से 2. मतपत्र प्रणाली से।

मत की गोपनीयता रखने के लिये प्रत्येक मतदान केन्द्र पर 2 या अधिक मतदान कक्ष (पोलिंग बूथ) होते हैं। जहां इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन अथवा मतपेटी होती है। इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन में जिस प्रत्याशी को मत

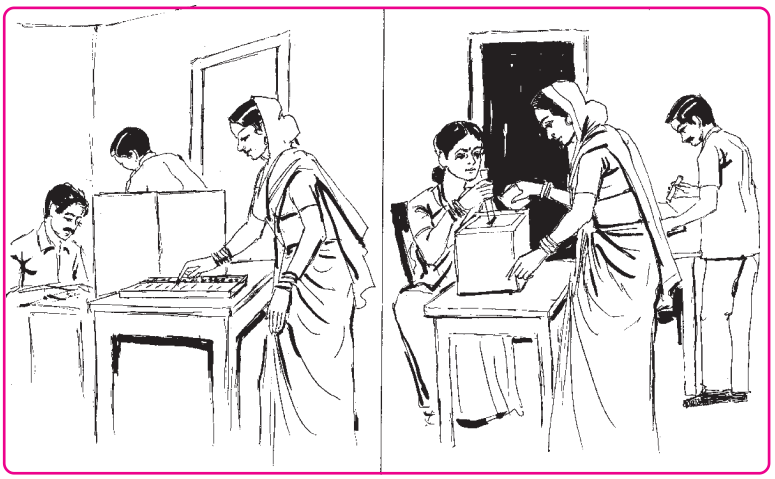

देना होता है उस प्रत्याशी के नाम के सामने चुनाव चिह्न छपा होता है इसके सामने वाले बटन को दबाकर मत (वोट) दिया जाता है।

मतपत्र द्वारा मतदान प्रणाली में, निर्वाचन अधिकारी के हस्ताक्षर युक्त मतपत्र मतदाता को दिया जाता है। मतदाता मतपत्र के साथ मतदान कक्ष में जाता है और इच्छित प्रत्याशी के चुनाव चिह्न पर सील (मोहर) लगाकर मत देता है। मतपत्र को मोड़कर मतपेटी में डाला जाता है। मतदान का समय समाप्त होने पर इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन बन्द की जाती है और सील की जाती है। मतपेटियों का प्रयोग होने पर मतपेटी को पहले बन्द किया जाता है और फिर मतदान सामग्री के साथ प्राप्त विशिष्ट कागज की सील से मतपेटी को सील कर दिया जाता है।

7. **मतगणना** – निर्धारित तिथि पर सभी मतपेटियों/वोटिंग मशीन को एकत्र किया जाता है। जिला निर्वाचन अधिकारी की उपस्थिति में मतों को गिना जाता है। अधिकतम मत प्राप्त प्रत्याशी को विजयी घोषित किया जाता है। निर्वाचित व्यक्ति अपने क्षेत्र का प्रतिनिधि होता है। निर्वाचन परिणाम घोषित होने के उपरांत जिला निर्वाचन अधिकारी द्वारा निर्वाचित प्रत्याशी को विजयी होने का प्रमाण-पत्र दिया जाता है।

निर्वाचन आयोग का उद्देश्य देश में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराना है। निर्वाचन के दिन सार्वजनिक अवकाश दिया जाता है ताकि सभी नागरिकों को अपना मत (वोट) देने का अवसर प्राप्त हो सके। निर्वाचन के दिन उस चुनाव क्षेत्र की मदिरा /शराब की दुकानें बंद रखी जाती हैं ताकि कोई उम्मीदवार मतदाताओं को प्रलोभन न दे सके। मतदाताओं को कोई डरा धमका न सके इसलिये व्यापक सुरक्षा प्रबन्ध किये जाते हैं।

भारतीय चुनाव प्रणाली के दोष

लोकतंत्र का भविष्य चुनावों की निष्पक्षता और बिना किसी प्रलोभन और दबाव के मतदान की स्वतंत्रता पर निर्भर करता है। भारतीय निर्वाचन को निष्पक्ष और स्वतंत्र रूप से कराने के लिए निर्वाचन आयोग पूरा प्रयास करता है, फिर भी कई समस्याएँ विद्यमान है। हमारी चुनाव प्रणाली के मुख्य दोष निम्न लिखित है-

1. **मतदान में पूर्ण भागीदारी का अभाव** – सार्वभौम वयस्क मताधिकार प्रणाली का उद्देश्य सभी नागरिकों को शासन में अप्रत्यक्ष भागीदार बनाना है। हम यह देखते हैं कि लोकसभा तथा राज्य विधानसभा चुनावों में एक बड़ी संख्या में मतदाता अपना वोट देने नहीं जाते हैं। इस कारण मतदाताओं के बहुमत से निर्वाचित उम्मीदवार जनता का प्रतिनिधि नहीं होता है। अत: यह वांछनीय है कि, सभी नागरिकों को मतदान में भाग लेना चाहिये।

2. **चुनाव में धन का प्रयोग** – निर्वाचनों में बढ़ता खर्च एक बड़ी समस्या है। प्रत्येक चुनाव में खर्च की सीमा निर्धारित है, परन्तु चुनाव में भाग लेने वाले अनेक प्रत्याशी बहुत अधिक धन खर्च करते हैं। धन व बल के अभाव में कई बार कुछ अच्छे और ईमानदार व्यक्ति चुनाव लड़ने में असमर्थ होते हैं। चुनाव में धन प्रयोग व्यक्ति की अनैतिक भूमिका का द्योतक है, जो चुनाव व्यवस्था में सुधार की दृष्टि से गंम्भीर समस्या है।

3. **चुनाव में बाहुबल का प्रभाव** – कई बार कुछ प्रत्याशी हर तरीके से चुनाव जीतना चाहते है, वे चुनाव में अपराधियों की मदद भी लेते हैं। हिंसा और बल का प्रयोग कर लोगों को डरा-धमकाकर वोट देने से रोकने, मतदान केन्द्र पर कब्जा करने, जबरदस्ती अवैध तरीके से मत डलवाना आदि काम भी करवाते हैं।

चुनाव प्रणाली के दोष

- मतदान में पूर्ण भागीदारी का अभाव
- चुनाव में काले धन का प्रयोग
- चुनाव में बाहुबल का प्रभाव
- सरकारी साधनों का दुरूपयोग
- निर्दलीय उम्मीदवारों की संख्या
- मतदाताओं की भावना प्रभावित करना।
- फर्जी मतदान

4. **सरकारी साधनों का प्रयोग** – निर्वाचन का समय आने से पहले कुछ शासक दल जनता को लुभाने वाले वायदे करने लगते है, शासकीय कर्मचारियों/अधिकारियों की अपने हितों के अनुकूल पदस्थापना करते हैं तथा शासकीय धन और वाहनों व अन्य साधनों का प्रयोग करते हैं। निर्वाचन अधिकारियों को भी प्रभावित करने के प्रयास करते हैं। इससे चुनावों की निष्पक्षता प्रभावित होती है।

5. **निर्दलीय उम्मीदवारों की संख्या** – चुनावों में निर्दलीय उम्मीदवारों की संख्या कभी-कभी बहुत अधिक होती है इससे चुनाव प्रबन्ध में कठिनाई आती है। मतदाता भी अधिक प्रत्याशियों के चुनाव मैदान में होने से भ्रमित होता है।

6. **मतदाताओं की भावना प्रभावित करना** – चुनावों के समय कुछ प्रत्याशी धर्म, जाति, क्षेत्र, भाषा आदि के आधार पर मतदाताओं की भावनाएँ प्रभावित करते हैं। राजनीतिक दल जाति के आधार पर प्रत्याशी चयनित करते हैं। लोगों की भावनाओं को उभार कर चुनावों को प्रभावित करना भारतीय निर्वाचन का सबसे बड़ा दोष है।

7. **फर्जी मतदान** – कई बार कुछ व्यक्ति दूसरे के नाम पर वोट डालने चले जाते हैं, एक से अधिक स्थान पर मतदाता सूची में नाम लिखाना, नाम न होते हुये भी वोट देने जाना आदि फर्जी मतदान है। यह भी हमारी चुनाव प्रणाली की बड़ी समस्या है।

8. **अन्य दोष** – मत देने के लिये नागरिकों का मतदाता सूची में नाम होना आवश्यक है। हम प्राय: यह देखते हैं कि अनेक लोगों के नाम इस सूची से छूट जाते हैं जबकि जिनकी मृत्यु हो गई है या वे अन्यत्र चले गए हैं उनके नाम भी मतदाता सूची में होते हैं। इस हेतु राजनीतिक दल जनता में जागरूकता पैदा नहीं करते। एक मतदान केन्द्र पर मतदाताओं की संख्या अधिक होने से भी कठिनाई आती है। एक प्रत्याशी कई बार दो या अधिक स्थानों से चुनाव में खड़ा हो जाता है। दोनों स्थानों से उसकी जीत होने की स्थिति में वह एक स्थान से त्यागपत्र देता है। पुन: उप चुनाव होते हैं- शासकीय और प्रत्याशियों के धन का अपव्यय होता है। ये सभी हमारी चुनाव प्रणाली के दोष हैं।

हमारे देश में चुनाव आयोग निरंतर यह प्रयास कर रहा है कि देश में निर्वाचन स्वतंत्र और निष्पक्ष हों। निर्वाचन आयोग के प्रयास से चुनाव प्रणाली के दोष कम करने के लिये प्रयास किये जाते हैं। मतदाता पहचान पत्र की व्यवस्था निर्वाचन आयोग की ही देन है। निर्वाचन प्रणाली के दोषों को दूर करने के निरंतर प्रयास किये जा रहे हैं।

13.6 निर्वाचन आयोग व उसके कार्य

निर्वाचन आयोग संविधान द्वारा गठित एक स्वतंत्र संस्था है। यह भारत में स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचनों की व्यवस्था सुनिश्चित करता है। देश की संसद, राज्य विधान मण्डल, राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचनों का कार्य निर्वाचन आयोग करता है। भारत के निर्वाचन आयोग का कार्यालय नई दिल्ली में है। निर्वाचन आयोग में एक मुख्य चुनाव आयुक्त और दो या अधिक अन्य सदस्य चुनाव आयुक्त कहलाते हैं। तीनों के अधिकार समान हैं और किसी प्रश्न पर मतभेद होने पर बहुमत से फैसला लिया जाता है। निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

निर्वाचन आयुक्तों का कार्यकाल, 6 वर्ष या 65 वर्ष की आयु जो भी पहले हो, होता है। मुख्य चुनाव आयुक्त को सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने की प्रक्रिया की तरह ही हटाया जा सकता है। इसका अर्थ है संसद

के दोनों सदन पृथक-पृथक रूप में अपने कुल सदस्यों के बहुमत और उपस्थित व मतदान करने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित कर राष्ट्रपति को भेजा जाता है। इसके उपरांत ही राष्ट्रपति द्वारा उसे पद से हटाया जा सकता है। किसी मुख्य चुनाव आयुक्त को अभी तक उसके पद से हटाया नहीं गया है। चुनाव आयुक्त को मुख्य चुनाव आयुक्त की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा हटाया जा सकता है।

निर्वाचन आयोग के कार्य

- निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करना।
- निर्वाचन नामावली तैयार कराना।
- चुनाव चिन्ह प्रदान करना।
- राजनीतिक दलों का पंजीयन और मान्यता देना।
- चुनाव कराना।
- सांसद और विधायकों की अयोग्यता निर्धारण में राय देना।
- आदर्श आचार संहिता तैयार कर लागू करना।
- विविध कार्य।

निर्वाचन आयोग के कार्य

हमारे देश में निर्वाचन के प्रबन्ध की पूरी जिम्मेदारी निर्वाचन आयोग की है। निर्वाचन आयोग की शक्तियों और कार्यों का स्त्रोत संविधान है। निर्वाचन आयोग के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं :

1. **निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करना** - किसी चुनाव से पहले चुनाव क्षेत्र का निर्धारण या परिसीमन किया जाता है। प्रथम साधारण निर्वाचन में निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन का कार्य निर्वाचन आयोग ने किया था। अब चुनाव क्षेत्र निर्धारण का कार्य परिसीमन आयोग करता है। इस आयोग का अध्यक्ष मुख्य निर्वाचन आयुक्त होता हैं।

2. **निर्वाचक नामावली तैयार कराना** - चुनाव आयोग का यह दूसरा मुख्य कार्य है। प्रत्येक निर्वाचन से पूर्व वह मतदान केन्द्र के अनुसार मत देने के योग्य नागरिकों की सूची तैयार करवाता है इसे निर्वाचन नामावली कहते हैं। नवीन सूची में 18 वर्ष के नागरिकों के नाम जोड़े जाते हैं और मृत्यु या अन्य कारण से अन्यत्र स्थानों पर चले गये नागरिकों के नाम हटाये जाते हैं। निर्वाचक नामावली को मतदाता सूची के नाम से भी जाना जाता है।

3. **चुनाव चिह्न प्रदान करना** - निर्वाचन आयोग ने राष्ट्रीय और राज्यीय राजनीतिक दलों के चुनाव चिह्न निर्धारित और संरक्षित कर दिये हैं। नये दलों या किसी दल के विभाजन के बाद बने दल को चुनाव चिह्नों का बँटवारा आयोग करता है। चुनाव चिह्न राजनीतिक दलों के लिये महत्वपूर्ण प्रतीक हैं। निर्वाचन के समय प्रत्याशी अपने लिए अपने चिह्न के आधार पर वोट मांगते हैं।

4. **राजनीतिक दलों का पंजीयन और मान्यता** - राजनीतिक दलों का पंजीयन करना और गत लोक सभा या विधान सभा चुनावों में प्राप्त मतों के आधार पर राष्ट्रीय या राज्यीय दल के रूप में मान्यता प्रदान करना आयोग का कार्य है। निर्वाचन आयोग कानून अनुसार चुनाव हो इस पर भी ध्यान रखता है।

5. **चुनाव कराना** - आयोग द्वारा निर्वाचन का कार्यक्रम घोषित किया जाता है। वह स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के लिये सभी प्रबंध और प्रयास करता है। इस हेतु चुनाव के समय राजनैतिक दलों और प्रत्याशियों को पालन करने वाले निर्देश जिसे आचार संहिता कहते हैं को जारी करता है। आयोग को निर्वाचनों का निरीक्षण और नियन्त्रण का अधिकार है। निर्वाचन आयोग हर सम्भव तरीके से स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने का प्रयास करता है।

6. **सांसदों व विधायकों की अयोग्यता निर्धारण में राय देना** - प्रतिनिधियों की अयोग्यता के विषय में राष्ट्रपति को राय देना भी आयोग का कार्य है। वर्ष 2006 में लाभ के पद मामलों में राष्ट्रपति द्वारा आयोग से राय मांगी गयी थी और उनकी राय पर संसद के कुछ सदस्यों की सदस्यता समाप्त की गई थी।

7. **विविध कार्य** - निर्वाचन आयोग चुनाव में प्रत्याशी के व्यय की सीमा का निर्धारण, चुनाव सुधार के उपाय करना, मतदाताओं को प्रशिक्षण आदि कार्य भी करता है।

शब्दावली

निर्वाचन क्षेत्र : एक खास भौगोलिक क्षेत्र के मतदाता, जो एक प्रतिनिधि का चुनाव करते हैं।

नियतकालीन : एक निश्चित समय पश्चात निर्वाचन का होना, जैसे प्रति पाँच वर्ष बाद।

आचार संहिता : चुनाव के समय पार्टियों और उम्मीदवारों द्वारा माने जाने वाले कायदे कानून और दिशा निर्देश।

चुनाव घोषणा पत्र : एक प्रकार का दस्तावेज होता है, जिसके माध्यम से राजनीतिक पार्टियाँ अपनी नीतियों तथा कार्यक्रमों का ब्यौरा प्रस्तुत करते हैं। इसमें पार्टी जनता को एक साफ-सुथरी और सक्षम सरकार बनाने का वचन देती है।

अमिट स्याही : चुनाव में मतदाता दोबारा मत न दे पाये इस हेतु उसकी उंगली पर अमिट स्याही लगाई जाती है। यह कई दिन में साफ होती है।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

सही विकल्प चुनकर लिखिए :

1. निम्न में से किसे वयस्क मताधिकार प्रदान किया जा सकता है-
   (i) अवयस्क पुरूष तथा महिलाओं को
   (ii) केवल पुरुषों को
   (iii) वयस्क पुरुष तथा महिलाओं को
   (iv) केवल महिलाओं को
2. किसे वोट देने का अधिकार नहीं है-
   (i) पागल या मानसिक विकलांगों को (ii) नाबालिगों को
   (iii) न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित (iv) उपरोक्त सभी
3. भारत में निम्नलिखित में से किसके बाद चुनाव प्रक्रिया शुरू मानी जाती है-
   (i) प्रत्याशी के नामांकन पत्र जमा करने के बाद
   (ii) चुनाव अधिसूचना जारी होने के बाद
   (iii) प्रचार कार्य प्रारम्भ होने के बाद
   (iv) चुनाव सभा होने से

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. हमारे देश के सभी स्त्री पुरूष जिनकी उम्र..... वर्ष है, वोट डालने के अधिकारी हैं।
2. कई दल मिलकर जब सरकार बनाते हैं, तब वह .....सरकार कहलाती है।
3. राजनीतिक दलों को मान्यता देने के लिए ..... आयोग बनाया गया है।

4. देश के प्रत्येक वयस्क महिला पुरूष को बिना किसी भेदभाव के मत देने का अधिकार ..... मताधिकार कहलाता है।

प्रोजेक्ट कार्य-

अपने देश की राजनैतिक पार्टियों के नाम चार्ट में लिखें।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक दल किसे कहते हैं, लिखिए।
2. मुख्य निर्वाचन आयुक्त को कौन नियुक्त करता है?
3. भारत के निर्वाचन आयोग का कार्यालय कहाँ स्थित है?
4. साझा सरकार किसे कहते हैं?

लघुउत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक दलों की विशेषतायें बताइए।
2. मध्यावधि निर्वाचन किसे कहते हैं?
3. निर्वाचन आयोग के मुख्य कार्य लिखिए।
4. निर्वाचक नामावली क्या हैं? इसका उपयोग बताइए।
5. विपक्षी दल की भूमिका का वर्णन कीजिए।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. मताधिकार किसे कहते हैं? मताधिकार के सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।
2. निर्वाचन से क्या आशय है? निर्वाचन आयोग के कार्यों को लिखिए।
3. राजनीतिक दलों की संख्या के आधार पर राजनीतिक दलों के प्रकार समझाइए।
4. दल व्यवस्था क्या है? उसका महत्व बतलाइए।
5. भारतीय निर्वाचन प्रक्रिया व भारतीय चुनाव प्रणाली के प्रमुख दोषों का वर्णन कीजिए।
6. राजनीतिक दलों के कार्य और महत्व बतलाइए।

❖❖ ★★ ❖❖

अध्याय - 14

नागरिकों के संवैधानिक अधिकार एवं कर्त्तव्य

हम पढ़ेंगे

14.1 मौलिक अधिकार का अर्थ एवं महत्व
14.2 संविधान द्वारा प्राप्त मौलिक अधिकार
14.3 राज्य के नीति निदेशक तत्व
14.4 मौलिक अधिकार एवं नीति निदेशक तत्वों में अन्तर
14.5 मौलिक कर्त्तव्यों से आशय व मौलिक कर्त्तव्य
14.6 नागरिकों को प्राप्त कानूनी अधिकार
- सम्पत्ति का अधिकार
- सूचना का अधिकार

14.1 मौलिक अधिकार अर्थ एवं महत्व

भारतीय संविधान कुल 22 भागों में विभाजित है इसके भाग 3 में मूल अधिकार, भाग 4 में नीति निदेशक तत्व और बाद में जोड़े गए भाग 4 (क) में मूल कर्त्तव्य वर्णित हैं। वास्तव में ये एक ही व्यवस्था के अंग हैं। यह संविधान में घोषित उद्देश्यों न्याय, स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व आदि को व्यवहार में स्थापित करने का प्रयास है। ये भारत में लागू की गई प्रजातांत्रिक जीवन पद्धति की नींव तथा उसके आवश्यक अंग हैं। अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियाँ है जो व्यक्ति के पूर्ण विकास के लिये आवश्यक होती है। लोकतांत्रिक समाज में नागरिकों को स्वतंत्र जीवन जीने के लिये कुछ अधिकारों की आवश्यकता होती है। ये उनकी मूल आवश्यकताओं एवं व्यक्ति की गरिमा से जुड़े होते हैं। इस कारण हम इन्हें मौलिक अधिकार कहते हैं। इन्हें समाज मान्य करता है क्योंकि ये सभी के लिये आवश्यक है। ये राज्य द्वारा स्वीकृत होते है, ताकि राज्य शक्ति का इनके पीछे आधार हो। इनका उल्लंघन होने पर वे न्यायालय के माध्यम से पुनः प्राप्त किए जा सकते हैं। अर्थात राज्य, शासन अथवा उसके अधीन कार्य करने वाले अधिकारियों की मनमानी कार्यवाहियों पर रोक के रूप में मौलिक अधिकार हैं। ये अधिकार संविधान द्वारा व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, नैतिक, सांस्कृतिक तथा सर्वोन्मुखी विकास के लिये प्रदान किये जाते हैं। इन अधिकारों का उपयोग कर नागरिक अपना विकास करते हैं।

अधिकार जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास एवं गरिमा के लिये आवश्यक है जिन्हें देश के संविधान में अंकित किया गया हैं और सर्वोच्च न्यायालय जिनकी सुरक्षा करता है, मौलिक अधिकार कहलाते हैं।

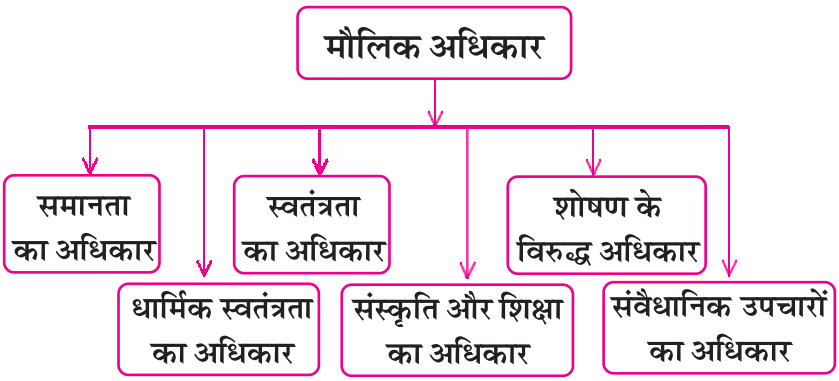

14.2 संविधान द्वारा प्राप्त मौलिक अधिकार

हमें संविधान द्वारा 6 मौलिक अधिकार प्राप्त हैं–

1. समानता का अधिकार

हमें निम्नलिखित समानता के अधिकार प्राप्त हैं–

(i) विधि के समक्ष समानता : संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा प्रत्येक नागरिक को विधि के समक्ष समानता और संरक्षण प्राप्त है। कानून सर्वोपरि है कानून से ऊपर कोई व्यक्ति नहीं है, एक-सा अपराध करने पर सभी समान दण्ड के भागीदार होंगे, चाहे उनका पद या स्थिति कैसी भी हो । इसका उद्देश्य विधायिकाओं एवं कार्यपालिकाओं की निरंकुशता को रोकना है।

अनुच्छेद 15 में स्पष्ट किया गया है कि धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर राज्य, नागरिकों के साथ कोई भेदभाव नहीं करेगा। दुकानों, सार्वजनिक स्थानों, भोजनालयों, सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश, उपर्युक्त आधारों पर रोका नहीं जा सकता। जनसाधारण के उपयोग हेतु निर्मित कुओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों, मेलों आदि के उपयोग में किसी प्रकार का भेदभाव व्यक्तियों या राज्य द्वारा नहीं किया जा सकेगा। महिलाओं, बच्चों, सामाजिक दृष्टि से पिछड़े लोगों के लिये विशेष प्रावधान करने का अधिकार राज्य को होगा। ऐसे प्रावधान समता विरोधी नहीं माने जावेंगे।

(ii) सरकारी पदों की प्राप्ति के अवसरों में समानता : संविधान के अनुच्छेद 16 में यह प्रावधान है कि नागरिक देश के किसी भी हिस्से में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। राज्य नागरिकों को उनकी योग्यता के अनुसार अवसर उपलब्ध करायेगा। इस कार्य में धर्म, जाति, लिंग, वंश तथा जन्म स्थान के आधार पर कोई भी भेद नहीं किया जायेगा। इस संबंध में राजकीय सेवाओं के लिये आवश्यक योग्यता निर्धारित करने का अधिकार राज्य को होगा। राज्य के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व पिछड़े वर्गों का समुचित अनुपात न होने से राज्य के अधीन सेवाओं में उनके लिए आरक्षण का प्रावधान अनुच्छेद 16 (4) के अनुसार राज्य द्वारा निर्धारित किया जा सकेगा। संविधान के 77वें संशोधन से राज्य पदोन्नति हेतु भी आरक्षण कर सकेगा।

(iii) अस्पृश्यता की समाप्ति : संविधान के अनुच्छेद 17 द्वारा नागरिकों में सामाजिक समानता लाने के लिए अस्पृश्यता/छुआछूत के आचरण का निषेध किया गया है। नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 द्वारा राज्य अथवा नागरिकों द्वारा किसी भी रूप में अस्पृश्यता का व्यवहार अपराध माना गया हैं। इसके लिए दण्ड की व्यवस्था की गई है। अत: किसी भी व्यक्ति को सार्वजनिक संस्थाओं, स्थलों, धार्मिक क्षेत्रों आदि में प्रवेश से नहीं रोका जा सकता। किसी को भी जाति या अन्य किसी आधार पर अपमानित नहीं किया जा सकता।

संविधान में अस्पृश्यता का किसी भी रूप में व्यवहार दण्डनीय अपराध है।

(iv) उपाधियों का अन्त : ब्रिटिश शासन काल में नागरिकों को रायबहादुर, खान बहादुर तथा सर जैसी उपाधियाँ दी जाती थीं। ये समानता और एकता में बाधा डालती थीं, ऊँच-नीच की भावना को बढ़ाती थीं। इस कारण संविधान के लागू होते ही इन उपाधियों को समाप्त कर दिया गया है। अब केवल सेना, शिक्षा एवं विज्ञान संबंधी विशिष्ट सम्मान तथा भारत के राष्ट्रपति द्वारा सराहनीय कार्यों/सेवाओं के लिये दी जाने वाली असैनिक उपधियाँ जैसे भारत रत्न, पद्मविभूषण, पद्मश्री आदि इसके अपवाद हैं।

2. स्वतंत्रता का अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 19 द्वारा नागरिकों को स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है। इससे उन्हें विचारों की अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता प्राप्त होती है। यह उनके व्यक्तित्व के विकास में सहायक होती है। हमें निम्नलिखित स्वतंत्रताएँ प्राप्त हैं:

(I) भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता : भारत के सभी नागरिकों को अपने विचार अभिव्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। भाषण इसका सशक्त साधन है। समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, चित्रण आदि के द्वारा वे अपने विचार प्रकट कर सकते हैं। लेकिन कोई भी व्यक्ति अपने विचार देश की सम्प्रभूता, अखण्डता, सुरक्षा, लोक व्यवस्था, शिष्टाचार, सदाचार, विदेशों से मैत्रीपूर्ण संबंध, न्यायालय का सम्मान आदि को ध्यान में रखकर ही कर सकता है। राज्य द्वारा उपर्युक्त आधारों पर भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर उचित सीमाएँ लगाई जा सकती है।

(II) अस्त्र-शस्त्र के बिना शान्तिपूर्ण ढंग से एकत्रित होने की स्वतंत्रता : इस अधिकार के तहत नागरिकों को सभा, जुलूस, प्रदर्शन आदि हेतु एकत्रित होने की स्वतंत्रता प्राप्त है। इस तरह के कार्यक्रम शान्तिपूर्ण और अस्त्र-शस्त्र के बिना होने चाहिये। नागरिकों को दी गई इस स्वतंत्रता पर आवश्यकतानुसार सरकार देश की संप्रभुता एवं अखण्डता, सार्वजनिक सुरक्षा आदि को ध्यान में रखकर प्रतिबंन्ध लगा सकती है।

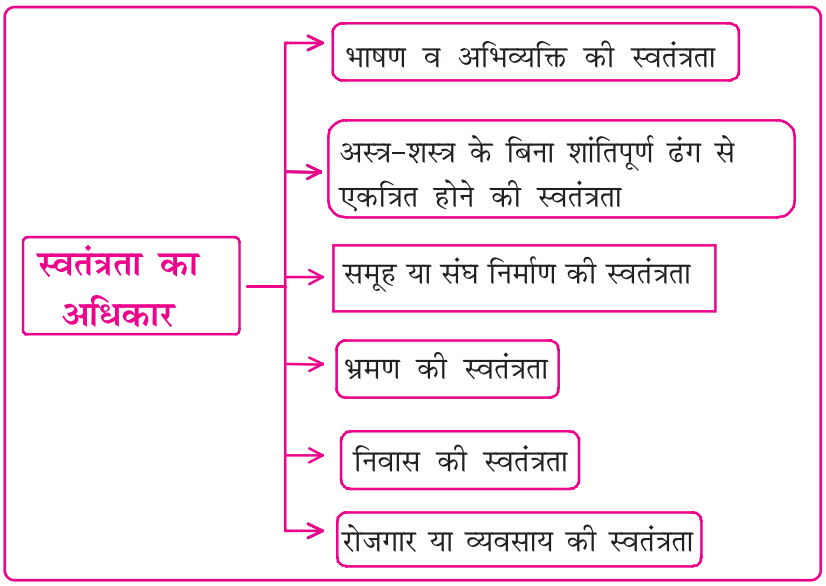

(III) समूह या संघ निर्माण की स्वतंत्रता : मानव के सामाजिक प्राणी होने के नाते सामूहिक जीवन उसका स्वभाव व विकास की आवश्यकता भी है। संघ एक से उद्देश्य की पूर्ति के लिए एकत्रित व संगठित व्यक्तियों के समूह को कहते हैं। संविधान में नागरिकों को अपनी इच्छानुसार संघ बनाने की स्वतंत्रता दी गई है। ये संघ व्यावसायिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक या अन्य साझेदारी, क्लब, मजदूर संगठन आदि हो सकते हैं। इन पर भी भारत की संप्रभुता, अखण्डता और लोक व्यवस्था, सदाचार आदि को ध्यान में रखकर राज्य द्वारा प्रतिबन्ध लगाए जा सकते हैं।

(IV) अबाध संचरण (आने-जाने) की स्वतंत्रता : भारत एक विशाल देश है इसमें अलग-2 जाति व धर्मों के लोग रहते हैं। देश की सीमा में नागरिकों को बिना किसी बाधा के कहीं भी आने जाने का अधिकार है। बिना रोक टोक के पूरे भारत में सभी नागरिक आ-जा सकते हैं।

(V) भारत में कहीं भी निवास की स्वतंत्रता : भारत के नागरिक देश के किसी भी भाग में रह सकते हैं। कहीं भी अपना निवास बना सकते हैं। राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता की दृष्टि से यह आवश्यक माना गया है। अत: एक प्रान्त और भाषा के लोग देश के अन्य किसी भाग में एवं अन्य भाषा भाषियों के बीच रह रहे हैं।

भारत में कहीं भी आने-जाने एवं निवास करने की स्वतंत्रता के अधिकार आपस में जुड़े है एवं भारत के राज्य क्षेत्र की अखण्डता पर बल देते हैं। जनसाधारण के हितों एवं जनजातियों की संस्कृति, (रीतिरिवाज) तथा भाषा की सुरक्षा हेतु इन स्वतंत्रताओं पर राज्य उचित प्रतिबंध लगा सकता है।

(VI) रोजगार या व्यवसाय की स्वतंत्रता : भारत का कोई भी नागरिक अपनी इच्छा से कोई भी वैध उपजीविका का साधन, व्यापार या व्यवसाय चुन सकता है। व्यवसाय चुनने के साथ ही नागरिक को अपनी इच्छानुसार उसे बंद करने का भी अधिकार है। अर्थात किसी भी नागरिक को उसकी इच्छा के विपरीत कोई

व्यवसाय करने को बाध्य नहीं किया जा सकता। विशेष व्यवसायों के लिए विशेष शैक्षणिक व तकनीकी योग्यताएँ राज्य निर्धारित कर सकता है। जनहित विरोधी व्यापार पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है। उदाहरणार्थ खतरनाक या नशीली वस्तुओं का व्यापार, मिलावटी पदार्थों व्यापार आदि वर्णित है।

अपराध के लिये दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण : अनुच्छेद 20 के अनुसार किसी भी व्यक्ति को तब तक अपराधी नहीं ठहराया जा सकता जब तक कि उसने अपराध करते समय लागू किसी कानून का उल्लंघन न किया हो। साथ ही वह उस समय किए हुए अपराध हेतु निर्धारित दण्ड का ही भागी होगा। किसी भी व्यक्ति को एक अपराध के लिये एक बार ही दण्डित किया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति को अपने ही विरुद्ध गवाही देने के लिये बाध्य नहीं किया जा सकेगा।

जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण : अनुच्छेद 21 के अनुसार किसी भी व्यक्ति को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा, उसके जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता। प्रत्येक व्यक्ति को जीवन एवं प्राणों की रक्षा के साथ मानवीय गरिमा के साथ जीवित रहने का अधिकार है। इसमें सम्मानजनक आजीविका का अवसर एवं बंधुआ मजदूरी से मुक्ति भी सम्मिलित है। परन्तु कोई भी व्यक्ति संविधान द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अतिरिक्त स्वतंत्रता का उपभोग नहीं कर सकता है।

गिरफ्तारी तथा निरोध से संरक्षण : संविधान के अनुच्छेद 22 के अनुसार व्यक्ति को गिरफ्तारी निवारण से सम्बधित कुछ अधिकार दिये गये हैं :

- किसी भी व्यक्ति को उसके अपराध के विषय में बताए बिना गिरफ्तार नहीं किया जा सकता।
- आरोपी को अपने बचाव के लिए वकील से सलाह लेने से वंचित नहीं किया जा सकता ।
- न्यायालय की आज्ञा के बिना दोषी को 24 घण्टों से अधिक बंदी बनाकर नहीं रखा जा सकता

अर्थात 24 घण्टों के अन्दर निकटतम न्यायालय के सामने दोषी को प्रस्तुत करना आवश्यक है।

निवारक नजरबंदी : यह किसी व्यक्ति द्वारा किए जा रहे गैर कानूनी कार्य को रोकने के लिए की जा सकती है। व्यक्ति जो देश की सुरक्षा, शांति और सार्वजनिक व्यवस्था को भंग करने का प्रयत्न करते हैं उन्हें गिरफ्तार कर कुछ समय के लिए नजरबंद रखा जा सकता है। यह अवधि तीन माह से अधिक नहीं हो सकती। ऐसे मामले में निरुद्ध व्यक्ति को कारण बताना होगा एवं उसे अपने पक्ष में अभ्यावेदन देने का अवसर भी देना होगा।

स्वतंत्रता के अधिकार का स्थगन

अनुच्छेद 19 में दिए गए स्वतंत्रता के अधिकार बाहरी आक्रमण या आंतरिक शांति भंग होने की स्थिति में राष्ट्रपति के आदेश से स्थगित किए जा सकते हैं परन्तु इसमें अनुच्छेद 20 एवं 21 के स्वतंत्रता के संरक्षण के अधिकार स्थगित नहीं होते।

3. शोषण के विरुद्ध अधिकार

अनुच्छेद 23 एवं 24 में बेगार, बलात् श्रम, एवं 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों एवं अन्य खतरों के स्थानों में नियोजन (नियुक्ति) आदि पर पाबंदी तथा उनके शोषण के विरुद्ध संरक्षण प्रदान किया गया है। इसका उद्देश्य यह है कि, कोई व्यक्ति अथवा राज्य किसी अन्य व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध कार्य करने के लिए विवश नहीं कर सकता है। लोक व्यवस्था हेतु अनिवार्य सेवा राज्य आरोपित कर सकता है, जैसे सैनिक सेवा आदि।

4. धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार

भारतीय गणराज्य को पंथनिरपेक्ष घोषित किया गया है। यह धर्म विहीन या धर्म विरोधी नहीं है। इसका

अर्थ है कि राज्य में सभी धर्मों को समान आदर व संरक्षण प्राप्त है। धर्म के आधार पर किसी के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म का पालन करने की पूर्ण एवं समान स्वतंत्रता है। अनुच्छेद 25 से 28 धार्मिक स्वतंत्रताओं की व्याख्या करते हैं।

(i) अंत:करण और धर्म की स्वतंत्रता : सभी व्यक्तियों को नागरिकों के साथ ही अपने अंत:करण के अनुसार किसी धर्म को मानने, उसका आचरण करने और प्रचार करने का हक है। यह स्वतंत्रता भी लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ के अधीन है। राज्य धर्म से संबंधित लौकिक गतिविधि के संचालन के नियम बना सकता है।

(ii) धार्मिक कार्यों के प्रबंध की स्वतंत्रता : सभी धार्मिक संप्रदायों को अधिकार है कि वे धार्मिक संस्थाओं की स्थापना और उनका पोषण कर सकते हैं। उनके लिए संपत्ति अर्जित कर सकते हैं एवं उसका प्रबंधन कर सकते हैं। यह सब कानून के अनुसार होना चाहिए।

(iii) किसी विशेष धर्म के पोषण हेतु कर नहीं लगाया जा सकता है।

(iv) राज्य निधि से सहयोग प्राप्त शैक्षिक संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा पर पाबंदी होगी। अन्य संस्थाओं के मामलों में व्यक्ति को धार्मिक शिक्षा या उपासना में उपस्थित होने की बाध्यता नहीं होगी।

5. संस्कृति एवं शिक्षा संबंधी अधिकार

भारत के सभी नागरिकों को संविधान के अनुच्छेद 29 व 30 द्वारा संस्कृति व शिक्षा का अधिकार दिया गया है। इस संबंध में निम्नलिखित व्यवस्था है:-

(i) भारत के प्रत्येक नागरिक को अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति सुरक्षित रखने का अधिकार है। किसी शिक्षण संस्था को सहायता देते समय राज्य, धर्म, जाति, लिंग, भाषा आदि के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। इन आधारों पर कोई शिक्षण संस्था किसी को प्रवेश देने से मना नहीं कर सकती।

(ii) धर्म या भाषा के आधार पर अल्पसंख्यक समुदायों को अपनी रुचि की शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करने व उनके संचालन का अधिकार है। वे उसका प्रबंधन भी कर सकेंगे। लेकिन कुप्रबंधन की स्थिति में राज्य को हस्तक्षेप का अधिकार होगा।

6. संवैधानिक उपचारों के अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 32 से 35 तक मौलिक अधिकारों की सुरक्षा के लिये संविधान में प्रबंध किये गये हैं। राज्य द्वारा ऐसा कोई भी कानून नहीं बनाया जा सकता जो मौलिक अधिकारों के विरुद्ध हो। कोई भी व्यक्ति अपने अधिकारों के संरक्षण के लिये न्यायालय में जा सकता है। न्यायालय ऐसे कानूनों को रद्द कर सकता है, जो मौलिक अधिकारों की अवहेलना करते हैं। इस तरह मूल अधिकारों को लागू कराने की संविधान में समुचित व्यवस्था भी है। इस हेतु न्यायालय पाँच प्रकार के लेख (रिट्) जारी कर सकते हैं।

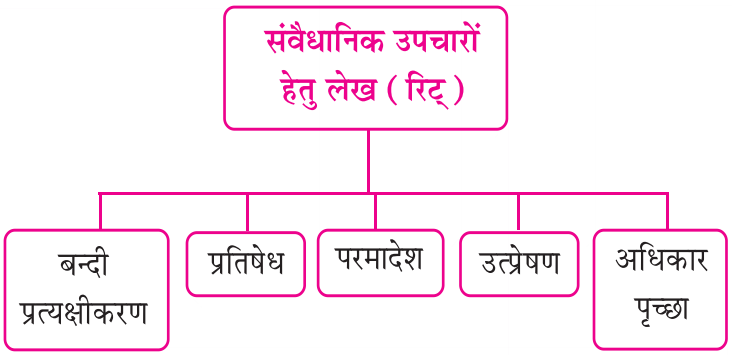

न्यायालय संबंधी रिट

(i) बन्दी प्रत्यक्षीकरण- बंदी बनाए गए व्यक्ति को सशरीर सामने प्रस्तुत करने का आदेश न्यायालय, संबंधित अधिकारी

को देता है।

(ii) **परमादेश-** न्यायालय, किसी अधिकारी या संस्था को उसके कानून द्वारा तय सार्वजनिक कर्त्तव्य के पालन के लिए आदेश जारी करता है।

(iii) **प्रतिषेध-** उच्च न्यायालयों द्वारा छोटे न्यायालयों को उस समय दिया जाता है जब वे अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जा रहे हों ये लेख मंत्रियों अधिकारियों के विरुद्ध भी जारी किया जा सकता है।

(iv) **उत्प्रेषण-** का लेख उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायालय या प्राधिकरण को उसमें चल रहे मामलों के अभिलेखों की जाँच हेतु भेजने के लिए देता है।

(v) **अधिकार पृच्छा-** यह लेख तब जारी किया जाता है जब कोई व्यक्ति/अधिकारी या संस्था ऐसा कार्य करते हैं जिसका उसे कानूनी दृष्टि से करने का कोई अधिकार नहीं है।

ये सभी लेख मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होने पर उल्लंघन करने वाले व्यक्ति या संस्था के विरुद्ध जारी किये जाते हैं।

14.3 राज्य के नीति निदेशक तत्व

भारत के संविधान में कल्याणकारी राज्य की स्थापना कर सभी नागरिकों को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय प्रदान करने के लिये नीति निदेशक सिद्धांतों को सम्मिलित किया गया है। नीति निदेशक तत्व संविधान निर्माताओं द्वारा केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों को नीतियों के निर्धारण के लिये दिये गये दिशा-निर्देश हैं। ये शासन प्रशासन के समस्त अधिकारियों हेतु व्यवहार के मार्ग दर्शक सिद्धांत भी है। इनके अनुसार ही सभी कार्य संपन्न हों यह अपेक्षा की गई है, परन्तु इनके अनुसार कार्य न होने पर नागरिक न्यायालय में अपील नहीं कर सकते, जैसा वह मौलिक अधिकारों के सन्दर्भ में कर सकते हैं। नीति निदेशक तत्व राज्य के कर्त्तव्य माने गये हैं। ये भारतीय संविधान की विशेषता है तथा समाजवादी और उदारवादी सिद्धांतों को ध्यान में रखकर जोड़े गये हैं।

नीति निदेशक तत्व भारत में सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति को साकार करने का सपना है। इनका उद्देश्य आम आदमी की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना और समाज के ढांचे को बदलकर भारतीय जनता को सही अर्थों में समान एवं स्वतंत्र बनाना है। ये संविधान के भाग 4 के अनुच्छेद 36 से 51 तक में वर्णित है। इनका उद्देश्य भारत को-

(1) कल्याणकारी राज्य में बदलना।

(2) गाँधीजी के विचारों के अनुकूल बनाना।

(3) अन्तर्राष्ट्रीय शांति के पोषक राज्य के रूप में विकसित करना।

(1) कल्याणकारी व्यवस्था :

(i) महिला व पुरुषों को जीविका के समान साधन उपलब्ध कराना।

(iii) देश के संसाधनों का प्रयोग लोक कल्याण के लिए हो।

(iii) धन और उत्पादन के साधन कुछ लोगों के हाथ में न हों, वरन् उनका उपयोग व्यापक जनहित में हो।

(iv) महिलाओं व पुरुषों को समान कार्य के लिये समान वेतन हो और उनके तथा बच्चों के स्वास्थ व शक्ति का दुरुपयोग न हो।

(v) बच्चों और नवयुवकों की आर्थिक एवं नैतिक पतन से रक्षा हो।

(vi) सभी को रोजगार और शिक्षा मिले, बेकारी एवं असमर्थता में राज्य सहायता करें।

(vii) कार्यस्थल, लोगों हेतु न्यायपूर्ण दशाओं की व्यवस्था करें।

(viii) सभी को गरिमामय जीवन स्तर, पर्याप्त अवकाश एवं सामाजिक सांस्कृतिक सुविधाएँ प्राप्त हों, सभी के भोजन एवं स्वास्थ के स्तर में सुधार हो।

(ix) बच्चों के लिये अनिवार्य नि:शुल्क शिक्षा का प्रबंध हो। 86 वे संविधान संशोधन अधिनियम 2002 द्वारा 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों हेतु शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराना।

(2) गाँधीजी के विचारों के अनुकूल निदेशक तत्व :

(i) कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना।

(ii) ग्राम पंचायतों का गठन एवं उन्हें स्वशासन की इकाई बनाना।

(iii) पिछड़ी एवं अनुसूचित जाति तथा जनजातियों की शिक्षा एवं आर्थिक हितों का संवर्धन तथा उन्हें शोषण से बचाना।

(iv) नशीली वस्तुओं के प्रयोग पर पाबंदी (औषधियों को छोड़कर)

(v) कृषि और पशुपालन वैज्ञानिक ढंग से करना।

(vi) दुधारू व बोझ ढोने वाले पशुओं की रक्षा एवं नस्ल सुधार करना।

(vii) पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन, वन एवं वन्य जीवों की रक्षा।

(viii) राष्ट्रीय व ऐतिहासिक महत्व के स्थानों की सुरक्षा।

(ix) लोक सेवा में कार्यपालिका एवं न्यायपालिका को पृथक करने का प्रयास।

(x) सारे देश में दीवानी तथा फौजदारी कानून बनाना।

(3) अंतर्राष्ट्रीय शांति को बढ़ावा

(i) अंतर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा को बढ़ावा देना।

(ii) राज्यों के मध्य न्याय व सम्मानजनक संबंधों को बनाए रखना।

(iii) अन्तर्राष्ट्रीय कानून एवं संधियों का आदर करना।

(iv) अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों को मध्यस्थता से निपटाने का प्रयास करना।

उपर्युक्त सभी नीति निदेशक तत्वों से लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना में सहयोग मिलेगा। प्रशासन की सफलता का मूल्यांकन इन आधारों पर हो सकेगा। सामाजिक, आर्थिक प्रजातांत्रिक व्यवस्था हेतु शासन द्वारा राजनैतिक दंगों पर नियंत्रण रखा जा सकेगा। इससे राष्ट्र निर्माण और विश्वशांति की स्थापना में भी सहयोग मिलेगा। ये संविधान निर्माताओं की पवित्र इच्छाएँ है, सामाजिक एवं आर्थिक आदर्श के सिद्धांत है तथा लोकमत का आईना है।

14.4 मौलिक अधिकार एवं नीति निदेशक तत्वों में अन्तर

मौलिक अधिकार व नीति निदेशक तत्वों में महत्वपूर्ण अंतर निम्नलिखित हैं:

(1) मौलिक अधिकारों के पीछे कानूनी शक्ति होती है। नीति निदेशक तत्वों के पीछे जनमत की शक्ति होती है। यदि शासन के किसी कानून से नागरिक के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होता है तो न्यायालय उसकी रक्षा के लिये उस कानून को अवैध घोषित कर सकता है। नीति निदेशक तत्वों के विरुद्ध यदि कोई कानून बनता है, तो न्यायालय उसे अवैध घोषित नहीं कर सकता। परन्तु जनमत

का भय होने से इन सिद्धांतों की अवहेलना राज्य आसानी से नहीं कर सकता।

(2) मौलिक अधिकारों की व्यवस्था निषेधात्मक है, जबकि नीति निदेशक तत्व सकारात्मक है। मौलिक अधिकार सरकार को कुछ कार्य करने से रोकते हैं, जबकि नीति निदेशक तत्व सरकार को अपने कर्त्तव्य को पूरा करने का निर्देश देते हैं।

(3) मौलिक अधिकारों का उद्देश्य राजनीतिक प्रजातंत्र की स्थापना है, जबकि नीति निदेशक तत्वों का उद्देश्य आर्थिक सामाजिक प्रजातंत्र की स्थापना है।

(4) मौलिक अधिकार नागरिकों के लिए है, जबकि नीति निदेशक तत्व सरकार के कर्त्तव्य हैं। ये सरकार के नीति निर्माण एवं व्यवहार के लिये दिये गए निर्देश हैं।

14.5 मौलिक कर्त्तव्य

जब भारत के संविधान का निर्माण हुआ था तब उसमें सिर्फ मौलिक अधिकारों का उल्लेख किया गया था, इसमें कर्त्तव्यों की कोई व्याख्या नहीं की गई थी, जबकि अधिकार एवं कर्त्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। केवल मूल अधिकारों की व्याख्या होने से नागरिक अपने अधिकारों के लिये तो जागरूक हो गए, परन्तु कर्त्तव्यों के प्रति उदासीन रहे। इस कमी के पूरा करने के लिये संसद ने सन् 1976 में 42 वे संविधान संशोधन द्वारा एक नया भाग 4 (क) जोड़कर नागरिकों के 11 मौलिक कर्त्तव्यों का उल्लेख किया। जो निम्नलिखित है

1. संविधान का पालन और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगान का सम्मान करें।
2. उन आदर्शों का सम्मान व अनुसरण करना जिनसे हमारी स्वतंत्रता की लड़ाई को प्रोत्साहन मिला।
3. भारत की सम्प्रभुता एकता और अखण्डता की रक्षा करना।
4. देश की रक्षा करना और जब आवश्यकता पड़े तो राष्ट्रीय सेवा में भाग लेना।
5. भारत के सभी लोगों के बीच समरसता और भाईचारे की भावना का निर्माण करना।
6. हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परम्परा को बनाए रखना।
7. पर्यावरण का संरक्षण और उसका संवर्धन करना।
8. वैज्ञानिक दृष्टिकोण और जिज्ञासा का विकास करना।
9. सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित करना।
10. व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करना।
11. 6 से 14 वर्ष के बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा दिलाना।

मौलिक कर्त्तव्यों का पालन राज्य के प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व है।

अधिकार और कर्त्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। हम अधिकारों की प्राप्ति कर्त्तव्यों की पूर्ति के बिना नहीं कर सकते। अगर नागरिक अपने मौलिक कर्त्तव्यों को पूरा करेंगे तो उन्हें अपने मूल अधिकारों की प्राप्ति में सरलता होगी। अगर नागरिक कर्त्तव्यों का पालन नहीं करते तो अव्यवस्था होगी और वातावरण अशान्त होगा। मौलिक कर्त्तव्यों की पूर्ति स्वस्थ सामाजिक वातावरण का निर्माण करती है। संविधान में मौलिक अधिकार और मौलिक कर्त्तव्यों के बीच कोई कानूनी सम्बन्ध निश्चित नहीं किया गया है। इनकी अवहेलना करने पर दण्ड की व्यवस्था नहीं है परन्तु हमारा राष्ट्र के प्रति यह दायित्व है। मौलिक कर्त्तव्य देश की सांस्कृतिक विरासत, राष्ट्रीय संपत्ति, व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रगति, देश की सुरक्षा व्यवस्था आदि को सुदृढ़ बनाने, पर्यावरण संरक्षित रखने, राष्ट्रीय आदर्शों का आदर करने एवं सामाजिक समरसता बनाए रखने की प्रेरणाएँ हैं।

14.6 नागरिकों को प्राप्त कानूनी अधिकार

मौलिक अधिकारों के अतिरिक्त नागरिकों को कुछ विशेष कानूनी अधिकार भी प्राप्त हैं। कानूनी अधिकार वे अधिकार हैं, जो मौलिक अधिकार की श्रेणी में नहीं आते, तथापि वे नागरिकों को कानून द्वारा प्रदत्त होते हैं। कानूनी अधिकारों को सरकार कभी भी समाप्त कर सकती है, इसके लिए संविधान में संशोधन करने की आवश्यकता नहीं होती। इस श्रेणी के अधिकारों में दो अधिकार प्रमुख हैं – 1. सम्पत्ति का अधिकार, 2. सूचना का अधिकार।

● सम्पत्ति का अधिकार

मूल संविधान में संपत्ति का मौलिक अधिकार भी नागरिकों को प्राप्त था, परन्तु आरम्भ से ही यह अत्यंत विवादास्पद रहा। अत: 44 वें संविधान संशोधन अधिनियम 1978 के द्वारा जून 1979 से संपत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकार की श्रेणी से निरस्त किया गया, यद्यपि अब यह एक कानूनी अधिकार है।

● सूचना का अधिकार

सूचना का अधिकार, लोकतंत्र के मजबूतीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। सन् 2005 में भारत सरकार ने 'सूचना का अधिकार अधिनियम–2005' के द्वारा देश के लोगों को किसी भी सरकारी कार्यालय से जानकारी प्राप्त करने का अधिकार दिया है। देश में विगत कई वर्षों से विकास में लोगों की भागीदारी बढ़ाने के कई प्रयास किए जाते रहे हैं। पंचायत राज की स्थापना और सार्वजनिक सेवाओं की निगरानी में स्थानीय समुदाय की भागीदारी इसका प्रमुख आयाम है। सार्वजनिक सेवाओं, सुविधाओं और योजनाओं, नियम कायदों के बारे में जानकारी न होने से लोग विकास के कार्यों में भलीभाँति भागीदारी नहीं कर पाते हैं, लेकिन अब सूचना के अधिकार के द्वारा विकास योजनाओं और सार्वजनिक कार्यों में पारदर्शिता लाई जा सकती है। शासकीय तंत्र में निर्णय लेने की प्रक्रिया में पक्षपात की सम्भावना एवं भ्रष्टाचार को समाप्त करने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है।

सूचना का अधिकार अधिनियम संबंधी विशेष तथ्य

◆ **सूचना के अधिकार किसे प्राप्त है–** सूचना का अधिकार देश के प्रत्येक नागरिक को प्राप्त है। कोई भी नागरिक लोक निकाय से उससे संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त सभी लोक निकाय अपने दैनिक कार्य–कलापों के संबंध में आवश्यक सूचनाओं को सूचना–पट पर लोगों की जानकारी के लिए प्रदर्शित करते हैं।

◆ **लोक निकाय से आशय –** ऐसे समस्त प्राधिकरण अथवा संस्थाएँ जिसकी स्थापना संसद या विधान मण्डल द्वारा बनाए गए कानून (अधिनियम) के अंतर्गत की गई हो, वे लोक निकाय की श्रेणी में सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त वे परिषद् भी इसमें सम्मिलित किये गए हैं जो स्वशासी अथवा गैर सरकारी हैं किंतु जिन्हें या तो सरकारी अनुदान मिलता है या जिनका नियंत्रण केंद्र या राज्य सरकार द्वारा किया जाता है। इस प्रकार लोक निकाय से आशय – सरकारी, संवैधानिक संस्थाएँ एवं विभागों से है।

सूचना के अधिकार के अन्तर्गत किस प्रकार की जानकारी प्राप्त की जा सकती है?

- सरकार व सरकार के किसी भी विभाग से संबंधित सूचना।
- सरकारी ठेकों, भुगतान, अनुमानित खर्च, निर्माण कार्यों के माप आदि की फोटो प्रतियाँ।
- सड़क, नाली व भवन निर्माण में प्रयुक्त सामग्री के नमूने।

- निर्माणाधीन अथवा पूर्ण विकास कार्यों का अवलोकन।
- सरकारी दस्तावेजों जैसे ड्राइंग, रिकार्ड पुस्तिका व रजिस्टरों आदि का अवलोकन।
- यदि कोई शिकायत की गई है या कोई आवेदन दिया गया है तो उस पर प्रगति की जानकारी।
- सरकारी परियोजनाओं की जानकारी जिनका क्रियान्वयन कोई भी सरकारी विभाग या स्वयंसेवी संस्था कर रही हो।

सूचना आयोग संबंधित लोक सूचना अधिकारी पर लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए सिफारिश कर सकता है।

इस अधिकार के तहत सरकारी कार्यालयों से कई तरह की जानकारियाँ प्राप्त कर सकते हैं। ग्राम पंचायत, गाँव में स्थित सेवाओं जैसे आँगनवाड़ी, राशन की दुकान, स्वास्थ्य केन्द्र व सरकारी अस्पताल, तहसील कार्यालय, जमीन का रिकॉर्ड, पुलिस थाना, वन विभाग, कृषि विभाग, कृषि उपज मण्डी, बैंक, पोस्ट ऑफिस, रेल विभाग, लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग, ग्रामीण यांत्रिकी सेवा, न्यायालय, स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, जनपद पंचायत, जिला पंचायत, कलेक्टर कार्यालय, एस.पी. ऑफिस, आदि सभी कार्यालयों से किसी भी तरह की जानकारी माँगी जा सकती है अर्थात् गाँवों और शहरों के सभी निकायों से लेकर जनपद, जिला तथा राजधानी में स्थित किसी भी कार्यालय से जानकारी माँगने का अधिकार अब लोगों को प्राप्त है।

◆ **सूचनाएँ प्राप्त करना** – सूचनाएँ दो प्रकार से प्राप्त की जा सकती हैं –

1. **प्रकाशित सूचनाओं द्वारा** – विभाग और शासकीय निकाय समय-समय पर उनसे संबंधित जानकारियाँ प्रकाशित करते हैं, अत: सूचनाएँ उनसे मिल जाती हैं।
2. **आवेदन-पत्र प्रस्तुत करके** – इस प्रकार सूचना प्राप्त करने के लिए आवेदक को सादे कागज पर अपना नाम, पता दर्शाते हुए विभाग, शासकीय निकाय के समक्ष प्राधिकारी के सम्मुख आवेदन प्रस्तुत करना होता है। चाहे गए दस्तावेजों की छाया प्रतियाँ भी माँगीं जा सकती हैं। इस हेतु कुछ शुल्क का प्रावधान भी है।

◆ जानकारी किस रूप में प्राप्त की जा सकती है?

सूचना के अधिकार के तहत किसी भी सरकारी कार्यालय से जानकारी निम्न रूपों में प्राप्त की जा सकती है –

1. दस्तावेज की फोटोकापी,
2. दस्तावेज एवं आँकड़ों की सीडी, फ्लापी, वीडियो कैसेट की प्रति,
3. प्रकाशन जो संबंधित विभाग द्वारा प्रकाशित किए गए हों,
4. दस्तावेजों का अवलोकन अर्थात् दस्तावेजों को उन्हीं के कार्यालय में पढ़ा जा सकता है।

◆ सूचना प्रकट किये जाने से छूट

कुछ सूचनाएँ अथवा जानकारियाँ ऐसी भी होती हैं, जो आम जनता तक नहीं पहुँचाई जा सकती हैं। उनके प्रकट किये जाने से देश की प्रभुता, अखंडता, सुरक्षा और आर्थिक तथा वैज्ञानिक हित को हानि पहुँचती है। अत: कुछ सूचनाओं को न देने की छूट दी गई है। निम्नलिखित सूचना देने के लिए सरकार व निकाय बाध्य नहीं है।–

- जिसके प्रकटन से भारत की प्रभुता, अखंडता, राज्य की सुरक्षा, रणनीति वैज्ञानिक या आर्थिक हित और विदेश से संबंध पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो।
- जो किसी अपराध को करने के लिए उकसाता हो।
- जिसको प्रकट करना किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकरण द्वारा मना किया गया है जिससे न्यायालय की अवमानना होती हो।
- जिसके प्रकटन से संसद या विधान मंडल के विशेषाधिकार भंग हो सकते हैं।
- जिसके प्रकटन किसी तीसरे पक्षकार (वाणिज्यिक और व्यापारिक) की प्रतियोगी स्थिति को नुकसान पहुँचता हो।
- किसी व्यक्ति को उसकी वैश्वासिक नातेदारी में उपलब्ध सूचना, जब तक कि सक्षम अधिकारी को यह न लगे कि ऐसी सूचना के प्रकटन से लोकहित का समर्थन होता है।
- किसी विदेशी सरकार से विश्वास में प्राप्त सूचना।
- सूचना, जिसके प्रकट करने से किसी व्यक्ति के जीवन या शारीरिक सुरक्षा को भय हो।
- सूचना, जिससे अपराधियों के अन्वेषण, पकड़े जाने या अभियोजन की क्रिया में अड़चन की सम्भावना हो।
- मंत्रिमंडल के कागज पत्र इसमें सम्मिलित है- मंत्रि परिषद् सचिवों और अन्य अधिकारियो के विचार विमर्श के अभिलेख।

◆ सूचना प्राप्ति शुल्क

गरीबी की रेखा से नीचे निवास करने वाले लोगों के लिए आवेदन शुल्क नहीं रखा गया है, शेष सभी के लिए सूचना प्राप्ति हेतु 10 रू. नगद अथवा उतनी राशि के स्टाम्प पर आवेदन टाईप कर या लिखकर लोक सूचना अधिकारी को दिया जा सकता है। प्रथम अपीलीय अधिकारी के समक्ष, प्रथम अपील करने का शुल्क 50 रू. व राज्य सूचना आयोग के समक्ष, द्वितीय अपील करने का शुल्क 100 रू. है।

आवेदन जमा कराने के बाद सूचना उपलब्ध करने के संदर्भ में होने वाले व्यय की सूचना लोक सूचना अधिकारी द्वारा आवेदक को दी जाती है। सूचना प्राप्ति के आवेदन अथवा अन्य व्यय हेतु ली गई नकद राशि अथवा शुल्क प्राप्ति की रसीद प्रदान की जानी आवश्यक है। लोक सूचना अधिकारी द्वारा 30 दिवस की समय सीमा में आवेदन का निराकरण किये जाने की व्यवस्था है।

◆ अपील एवं शिकायत पर कार्यवाही एवं अभिसमय

लोक सूचना अधिकारी द्वारा सूचना आधी, पूर्णत: सही न दिये जाने पर आवेदक 30 दिनों के भीतर प्रथम अपीलीय अधिकारी को अपील कर सकता है। अपीलीय अधिकारी को, अपील प्राप्त होने के सामान्यत: 30 दिन एवं अधिकतम 45 दिन के भीतर कार्यवाही अपेक्षित है। साथ ही इस कार्यवाही की सूचना आवेदक को भी दिया जाना चाहिए। जिस पर 30 दिनों के भीतर कार्यवाही कर आवेदक को सूचित किया जाता है। यदि प्रथम अपीलीय अधिकारी 30 दिन के भीतर की गई प्रथम अपील पर कार्यवाही की सूचना आवेदक को नहीं देता है तो आवेदक 90 दिनों के अंदर द्वितीय अपील राज्य सूचना आयोग में कर सकता है अथवा सूचना आयोग

को पूर्व विवरण सहित शिकायत कर सकता है।

◆ सूचना न देने पर दण्ड

सूचना नहीं देने वाले अधिकारियों को निम्नलिखित स्थितियों में सजा दी जा सकती है –

- लोक सूचना अधिकारी या सहायक लोक सूचना अधिकारी द्वारा आवेदन लेने से इंकार करना।
- समय सीमा में जानकारी नहीं देना।
- जानबूझ कर गलत, अधूरी व गुमराह करने वाली जानकारी देना।
- माँगी गई सूचना को नष्ट करना।

उपर्युक्त स्थितियों में सूचना आयोग ऐसे लोक सूचना अधिकारियों पर रु. 250/– प्रतिदिन से लेकर अधिकतम रु. 25,000/– तक अर्थदण्ड आरोपित करने का आदेश दे सकता है। इसी प्रकार लोक सूचना अधिकारी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई करने हेतु विभाग प्रमुख को आयोग अनुशंसा भी कर सकता है।

◆ सूचना आयोग का गठन

सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय सूचना आयोग तथा प्रदेश स्तर पर राज्य सूचना आयोग गठन का प्रावधान है। राज्य सूचना आयोग में एक मुख्य सूचना आयुक्त के अतिरिक्त अधिक से अधिक 9 और सूचना आयुक्त नियुक्त करने का प्रावधान है। राज्य मुख्य सूचना आयुक्त और सूचना आयुक्तों की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा एक समिति की सिफारिश पर की जाती है, जिसके अध्यक्ष मुख्यमंत्री होते हैं। इस समिति में विधानसभा में विपक्ष के नेता और मुख्यमंत्री द्वारा नामित एक मंत्री भी होते हैं। मुख्य सूचना आयुक्त व राज्य सूचना आयुक्तों का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है।

राज्य सूचना आयोग के कार्य व अधिकार

1. राज्य सूचना आयोग का कार्य सूचना के अधिकार को लागू करवाना है। आयोग लोगों से सूचना प्राप्त करने में आने वाली अड़चनों को दूर करता है और इससे संबंधित शिकायतों/अपीलों की सुनवाई करता है।
2. आयोग सूचना के अधिकार से संबंधित किसी भी प्रकरण की जाँच के आदेश दे सकता है।
3. आयोग के पास सिविल कोर्ट से संबंधित समस्त अधिकार हैं। इसके अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को समन जारी करना, सुनवाई के दौरान उसकी हाजिरी सुनिश्चित करना तथा साक्ष्य प्रस्तुत करने के आदेश देने जैसे अधिकार प्रमुख हैं।

सूचना के अधिकार का सैद्धांतिक आधार

यह अधिकार एक महत्वपूर्ण अधिकार है क्योंकि यह प्रमुख रूप से तीन सिद्धांतों पर आधारित है। ये तीन सिद्धांत निम्नलिखित है–

1. **जवाबदेही का सिद्धांत–** हमारे शासन का स्वरूप लोकतांत्रिक है। इससे सरकारें लोकहित के लिए उत्तरदायी ढंग से कार्य करती हैं। मात्र किसी व्यक्ति या वर्ग विशेष के लाभ के लिए कार्य नहीं किया जाना चाहिए। अत: सरकार तथा इससे संबंधित समस्त संगठनों एक लोक प्राधिकरणों को जनता के प्रति उत्तरदायी बनाया गया है। जनता को इनके कार्यों की जानकारी देना आवश्यक है।

2. **सहभागिता का सिद्धांत** – एक प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सरकारों द्वारा अधिकांश कार्य जनता के लिए और जनता के सहयोग से किया जाता है। योजना निर्माण की प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी होना आवश्यक है ताकि लोगों द्वारा समय रहते जनता के हित में योजनाओं में वांछित परिवर्तन एवं संशोधन किया जा सके।

3. **पारदर्शिता का सिद्धांत** – सूचना के अधिकार का तीसरा व अंतिम आधार है– पारदर्शिता का सिद्धांत। सार्वजनिक धन एवं समय के दुरूपयोग, भ्रष्टाचार, गबन आदि को रोकने के लिए सरकारी काम–काज में पारदर्शिता होना आवश्यक है।

पारदर्शिता से भ्रष्ट लोगों पर अंकुश लगाया जा सकता है और ईमानदार लोग निर्भय एवं निष्पक्ष होकर काम कर सकेंगे।

सूचना के अधिकार का महत्व

प्रजातंत्र में जनता का शासन, जनता के लिए, तथा जनता के द्वारा संचालित किया जाता है। जानकार नागरिक एवं सूचनाओं की पारदर्शिता प्रजातंत्र की बुनियादी आवश्यकता होती है। सूचना के अधिकार का महत्व निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट हो सकता है –

1. **मौलिक अधिकारों के उपयोग को प्रभावशाली बनाना** – मौलिक अधिकारों में सूचना का अधिकार भी निहित है। यह भाषण एवं अभिव्यक्ति के मौलिक अधिकार की रक्षा करता है। सूचना एवं जानकारी के अभाव में किसी भी व्यक्ति को सार्थक ढंग से अपनी राय बनाना या अभिव्यक्त करना संभव नही है। सर्वोच्च न्यायालय ने इसे संविधान A21 के अंतर्गत प्रदत्त जीवन के अधिकार से भी जोड़ा है। जानने के अधिकार के बिना जीने का अधिकार अधूरा रह जाता है।

2. **शासन को उत्तरदायी बनाना**– यह अधिकार शासन को उत्तरदायी भी बनाता है, क्योंकि यह जवाबदेही के सिद्धांत पर आधारित है। जब तक सार्वजनिक एवं अन्य निकाय अपने कार्यों, आय–व्ययों के जवाब यदि जनता को देने के लिए बाध्य नहीं होंगे तो उनके कार्यों में शिथिलता, भ्रष्टाचार गबन आदि के अवसर बहुत अधिक बढ़ जाएंगे एवं जनता के समय एवं धन का दुरूपयोग होता रहेगा।

3. **शासन को पारदर्शी बनाना** – इस अधिनियम का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं शासन में पारदर्शिता लाना। जनता के प्रतिनिधि अपने अधिभारों का उपयोग उचित ढ़ंग से कर रहे है या नहीं, पैसों का उपयोग सही ढ़ंग से हो रहा है या नहीं इन तथ्यों की जानकारी जनता को होना चाहिए। इससे सार्वजनिक धन के माध्यम से जन–कल्याण का उद्देश्य प्राप्त किया जा सकता है। सूचना के अधिकार से पारदर्शिता होगी और सार्वजनिक धन को सावधानी से प्रयोग करने का दबाव बनेगा।

4. **शासन व्यवस्था में नागरिकों की सहयोगिता बढ़ाना** – भारतीय संविधान सहभागी लोकतंत्र के सिद्धांत पर आधारित है। इस हेतु नागरिकों द्वारा चुनाव के माध्यम से अपने प्रतिनिधि का चयन किया जाता है, परंतु पिछले काफी समय से नागरिकों की सहभागिता केवल मताधिकार तक ही सीमित रह गई है। इसके पीछे आवश्यक सूचनाओं के अभाव में नागरिकों की निष्क्रियता एक प्रमुख कारण रहा है। अतः शासन व्यवस्था में नागरिकों की सहभागिता बढ़ाने में यह अधिकार एक प्रभावी अस्त्र है।

5. **भ्रष्टाचार पर रोक** – सूचना का अधिकार बढ़ते हुए भ्रष्टाचार को रोकने का एक सशक्त अस्त्र है। पारदर्शिता एवं जवाबदेही के सिद्धांत पर आधारित होने के कारण भ्रष्ट आचरण करने वाला व्यक्ति तुरंत पहचान लिया जाएगा एवं उसके विरूद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकेगी। इसी भय के कारण उत्तरदायी लोग गलत कामों

से दूर होंगे और सुशासन की परिकल्पना को भी साकार कर सकेगें हैं।

6. शासकीय योजनाओं को सफल बनाना – योजनाओं को सफल बनाने में भी सूचना के अधिकार की महत्वपूर्ण भूमिका है। शासकीय योजनाओं की सफलता मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर करती है – एक योजना का क्रियान्वयन सही ढंग से निर्धारित समयावधि में पूर्ण हो जाए एवं दूसरा, योजना का लाभ वास्तविक लाभार्थी तक पहुँचाया जा सके। इन दोनों ही उद्देश्यों की पूर्ति में सूचना का अधिकार एक कारगार अस्त्र है। इससे शासकीय प्रक्रियाओं के अनावश्यक बोझ से भी बचा जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूचना का अधिकार एक अत्यधिक महत्वपूर्ण अधिकार है।

शब्दावली

संविधान – देश का सर्वोच्च कानून। इसमें किसी देश की राजनीति और समाज को चलाने वाले मौलिक कानून होते हैं।

संविधान संशोधन – देश की सर्वोच्च विधायी संस्था द्वारा उस देश के संविधान में किया जाने वाला बदलाव।

पंथनिरपेक्ष – नागरिकों को किसी भी धर्म को मानने की पूरी स्वंतत्रता है, लेकिन कोई धर्म अधिकारिक नहीं है। सरकार सभी धार्मिक मान्यताओं और आचरणों को समान सम्मान देती है।

आरक्षण – भेदभाव के शिकार, वंचित और पिछड़े लोगों और समुदायों के लिए सरकारी नौकरियों में कुछ शैक्षिक संस्थाएं पद एवं सीटें आरक्षित करने की नीति।

रिट – उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सरकार को जारी किया गया एक औपचारिक लिखित आदेश।

लोकनिकाय – सरकारी, संवैधानिक संस्थाएँ एवं विभाग

सूचना सामग्री – कोई भी सामग्री जो अनेक रूप में हो सकती है जैसे रिकार्ड, रिपोर्ट, नमूना, मॉडल आदि जिससे आवेदक को जानकारी प्राप्त होती है।

अभ्यास

सही विकल्प चुनकर लिखिए :

1. 44 वे संशोधन के द्वारा किस मौलिक अधिकार को मूल अधिकारों की सूची से हटा दिया गया है–

   (i) सम्पत्ति का अधिकार (ii) स्वतंत्रता का अधिकार

   (iii) समानता का अधिकार (iv) संस्कृति एवं शिक्षा का अधिकार

2. इसमें से कौन–सा कार्य बाल श्रम की श्रेणी में आता है–

   (i) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से होटलों में, निर्माण कार्य में या खदानों में कार्य कराना।

(ii) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों का घूमना और शिक्षा प्राप्त करना

(iii) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के खेल का कार्य

(iv) 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के शारीरिक व्यायाम करना

3. इनमें से कौनसा अधिकार स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार से संबधित नहीं है–

(i) भाषण की स्वतंत्रता (ii) उपाधियों का अन्त

(iii) निवास की स्वतंत्रता (iv) भ्रमण की स्वतंत्रता

4. किस लेख द्वारा उच्चतम या उच्च न्यायालय किसी भी अभिलेख को अपने अधीनस्थ न्यायालय से अपने पास मंगा सकता है–

(i) बंदी प्रत्यक्षीकरण (ii) उत्प्रेषण

(iii) अधिकार पृच्छा (iv) परमादेश

5. 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार किस मौलिक अधिकार के अन्तर्गत आता है।

(i) समानता का अधिकार (ii) संस्कृति एवं शिक्षा संबंधी अधिकार

(iii) स्वतंत्रता का अधिकार (iv) संवैधानिक उपचारों का अधिकार

6. मौलिक अधिकारों का संरक्षण निम्नलिखित में से कौन करता है–

(i) संसद (ii) विधानसभाएँ

(iii) सर्वोच्च न्यायालय (iv) भारत सरकार

7. सूचना समय पर न मिलने पर सबसे पहले अपील की जाती है–

(i) विभाग प्रमुख (ii) लोक सूचना अधिकारी

(iii) सूचना आयोग (iv) मुख्यमंत्री

8. राज्य के नीति निदेशक तत्व निम्न में से क्या है–

(i) कानून द्वारा बन्धनकारी हैं। (ii) न्याय योग्य हैं।

(iii) राज्य के लिये रचनात्मक निर्देश हैं। (iv) न्याय पालिका के आदेश हैं।

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. मौलिक अधिकारों के पीछे ..... की शक्ति होती है।
2. सूचना का अधिकार बढ़ते ..... को रोकने का सशक्त अस्त्र है।
3. संविधान के अनुच्छेद ..... के द्वारा प्रत्येक नागरिक को विधि के समक्ष समानता और संरक्षण प्राप्त है।
4. संविधान में अस्पृश्यता ..... अपराध हैं।
5. संविधान के 44 वें संशोधन द्वारा ..... के मौलिक अधिकार को मौलिक अधिकारों की सूची से हटा दिया गया है।

अतिलघुत्तरीय प्रश्न

1. कानून के समक्ष समानता का क्या अर्थ है?

2. मौलिक अधिकार के प्रकारों के नाम लिखिए।
3. संविधान में अस्पृश्यता का अन्त करने के लिये क्या व्यवस्था की गई है?
4. सूचना का अधिकार किसे प्राप्त हैं?
5. सूचना के अधिकार के किन सिद्धांतो पर आधारित है?
6. नीति निदेशक तत्व किसके लिये निर्देश हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नीति निदेशक तत्व और मौलिक अधिकारों में क्या अन्तर हैं, स्पष्ट करिए।
2. मौलिक अधिकारों को न्यायिक संरक्षण किस प्रकार प्राप्त है? समझाइए।
3. मौलिक अधिकार और मौलिक कर्त्तव्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, उक्त कथन को समझाइए।
4. किस प्रकार की सूचना देने के लिए सरकार बाध्य नहीं है? कोई चार छूट बताइए।
5. अंतर्राष्ट्रीय शांति को बढ़ावा देने हेतु नीति निदेशक तत्वों में क्या निर्देश हैं? लिखिए।
6. स्वतंत्रता के अधिकार से हमें कौन-कौनसी स्वतंत्रताएँ प्राप्त हुई हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. मौलिक अधिकारों से आशय व उसके महत्व को स्पष्ट करिए।
2. स्वतंत्रता के अधिकार के अंतर्गत नागरिकों को कौनसी स्वतंत्रताएँ प्राप्त हैं?
3. संवैधानिक उपचारों के अधिकार के अन्तर्गत कौनसे प्रमुख लेख (रिट्) न्यायालय जारी करते हैं?
4. सूचना के अधिकार के कोई दो सैद्धांतिक आधारों वर्णन कीजिए साथ ही लिखिए कि यदि सूचना समय पर न मिले तो क्या करना चाहिए?
5. सूचना के अधिकार का महत्व स्पष्ट करते हुए सूचना आयोग गठन के बारे में लिखिए।
6. मौलिक कर्त्तव्य किसे कहते हैं? संविधान में वर्णित मौलिक कर्त्तव्यों का वर्णन करिए।
7. नीति निदेशक तत्वों के प्रकार स्पष्ट करते हुए उनका वर्णन करें।

प्रायोजना कार्य

1. आप अपने दैनिक जीवन में क्या-क्या स्वतंत्रता अनुभव करते हैं? उनकी सूची बनाएँ और देखिए कि उनसे आपके विकास में क्या सहयोग मिल रहा है। इस तरह से आप अपने स्वतंत्रता संबंधी मौलिक अधिकारों को जानने का प्रयत्न करें। इस विवरण को प्रोजेक्ट के रूप में तैयार करिए।
2. अपने मौलिक कर्त्तव्यों की जानकारी का एक चार्ट बनाकर अपने कक्ष में लगाएँ। एक बार उसे पढ़कर चिंतन करें कि आपने कितने कर्त्तव्यों का पालन आज किया है। इस तरह अपने सभी कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहने की प्रेरणा अपने मित्रों को भी दें।

❖❖ ★★ ❖❖

अध्याय - 15

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास

हम पढ़ेंगे

15.1 अर्थव्यवस्था से आशय एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था।
15.2 प्राचीन भारत की ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था का विकास।
15.3 ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास हेतु सरकारी प्रयास।
15.4 प्राचीन एवं आधुनिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन।
15.5 आदर्श ग्राम की अवधारणा।
15.6 म.प्र. के चयनित ग्राम का आर्थिक अध्ययन

15.1 अर्थव्यवस्था से आशय एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था

किसी देश की अर्थव्यवस्था में उस देश में उपलब्ध सभी प्रकार के प्राकृतिक संसाधन एवं वह संपूर्ण क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है, जहाँ तक उसकी आर्थिक गतिविधियाँ संचालित होती हैं। सामान्यत: अर्थव्यवस्था से आशय आर्थिक संसाधनों के स्वामित्व से है। अर्थव्यवस्था तीन प्रकार की हो सकती है- पूंजीवादी अर्थव्यवस्था, समाजवादी अर्थव्यवस्था तथा मिश्रित अर्थव्यवस्था। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में संसाधनों पर निजी नियंत्रण होता है, समाजवादी अर्थव्यवस्था में संसाधनों पर सरकारी नियंत्रण तथा मिश्रित अर्थव्यवस्था में कुछ संसाधनों पर सरकारी नियंत्रण तथा अन्य पर निजी नियंत्रण होता है। अर्थव्यवस्था शब्द का अर्थ सामान्यत: एक देश की अर्थव्यवस्था से ही लिया जाता है, इसका अर्थ एक शहर या गाँव आदि की अर्थव्यवस्था से भी लिया जा सकता है। एक शहर की अर्थव्यवस्था में वहाँ स्थित कारखानें, दुकानें, कार्यालय तथा अन्य सभी प्रकार के कार्य स्थल सम्मिलित होते हैं। इसी प्रकार एक गाँव की अर्थव्यवस्था में वहाँ स्थित खेत, दुकानें और अन्य सभी प्रतिष्ठान जहाँ व्यक्ति काम करते हैं; शामिल किये जाते हैं। इस प्रकार अर्थव्यवस्था जीविकोपार्जन का क्षेत्र होता है।

अर्थव्यवस्था एक प्रणाली है जिसके द्वारा मनुष्य जीविकोर्पाजन करता है तथा अर्थव्यवस्था एक क्षेत्र विशेष में विद्यमान उत्पादन इकाइयों से बनती है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि अर्थव्यवस्था का अर्थ एक देश के उन सभी खेतों, कारखानों, दुकानों, खदानों, बैंकों, सड़कों, स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों, अस्पतालों आदि से है जो लोगों को रोजगार देते हैं एवं वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करते हैं, तथा जिनका उपयोग वहाँ की जनता द्वारा किया जाता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि प्रारंभ से ही यहाँ का मुख्य व्यवसाय रहा है। काँस्य युगीन सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर आज तक भारतीय जन प्रमुख रूप से कृषि व्यवसाय ही करते आए हैं। वैदिक युग में कृषि ही अर्थव्यवस्था का मुख्य आर्थिक आधार थी। पशुपालन, आखेट और दस्तकारी का भी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान था। युद्धों की अधिकता के कारण बढ़ईगिरी एवं लुहारी प्रमुख व्यवसाय थे। मध्ययुग में भी भारत में कृषि प्रमुख व्यवसाय था। इसी कारण इसके विकास के लिये समय-समय पर प्रशासकों द्वारा प्रयास किये गए। मोहम्मद तुगलक ने सिंचाई सुविधाएँ बढ़ाने के लिये नहरों का निर्माण कराया। शेरशाह सूरी ने भूमि मापन कराया। अकबर के शासन काल में टोडरमल ने भी सही ढंग से भू-मापन कराया और उस आधार पर

कर राशि का निर्धारण किया। उस समय हर छोटे-बड़े राज्य की आय का मुख्य स्त्रोत कृषि उपज ही थी। वस्त्र निर्माण का इस युग में विशेष विकास हुआ। गुणवत्ता की दृष्टि से ढाका की मलमल का नाम आज भी लिया जाता है। रंगरेजी, रेशम के कपड़ों की बुनाई, शाल एवं दरियाँ बनाने के उद्योग भी महत्वपूर्ण थे। व्यापार वाणिज्य भी बहुत विकसित था। अत: आर्थिक ढाँचा सुदृढ़ था।

भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषताओं को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय अर्थव्यवस्था को प्रमुख रूप से दो आधारों पर बाँटा गया है। भौगोलिक एवं कार्यात्मक। यदि हम भौगोलिक आधार पर वर्गीकरण को लेते हैं तो यह दो प्रकार की है- ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं शहरी अर्थव्यवस्था। इस अध्याय में हम ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे।

15.2 ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास

भारत की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में रहती है। अत: ग्रामीण अर्थव्यवस्था का महत्व बहुत अधिक है। अध्ययन की सुविधा के लिये हम भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास को तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं- (i) अंग्रेजों के आगमन के पूर्व ग्रामीण अर्थव्यवस्था (ii) अंग्रेजों के आगमन के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं (iii) स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था।

(i) अंग्रेजों के आगमन के पूर्व ग्रामीण अर्थव्यवस्था

प्राचीन काल में भी देश की अधिकांश जनसंख्या गाँवों में निवास करती थी। वस्तुत: गाँव ही अर्थव्यवस्था की प्रमुख इकाई थी। उस समय गाँव आत्मनिर्भर, समृद्ध एवं खुशहाल थे। प्राचीन ग्रामीण अर्थव्यवस्था आज के गाँवों से बहुत भिन्न थी। इसकी विशेषताओं को निम्न बिंदुओं के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है।

कार्यशील समुदाय की संरचना : प्राचीन समय में गाँव की कार्यशील जनसंख्या या समुदाय के तीन प्रमुख अंग थे - कृषक, दस्तकार तथा ग्राम अधिकारी।

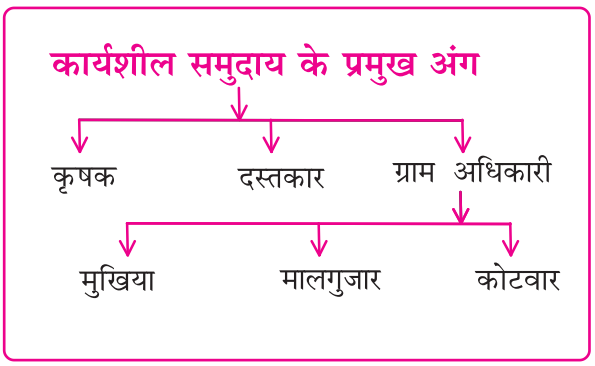

कृषक : ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग कृषक ही था। विशेष बात यह थी कि प्रत्येक कृषक का गाँव में अपना घर तथा भूमि में हिस्सा होता था। वे साधन संपन्न होते थे। खेती का उद्देश्य प्राय: जीवन निर्वाह होता था।

दस्तकार : प्रत्येक गाँव में बढ़ई, लुहार, कुम्हार, सुनार, कारीगर, मोची, जुलाहे आदि सभी प्रकार के दस्तकार होते थे। ये ग्रामीण समुदाय की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं को गाँव में ही पूरा कर देते थे। उनके कार्यों का पारिश्रमिक अनाज या वस्तु के रूप में दिया जाता था।

ग्राम अधिकारी : ग्राम अधिकारी मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते थे- (अ) मुखिया- यह गाँव का प्रमुख अधिकारी होता था तथा यह किसानों से लगान की वसूली कर शासक को देने के लिये उत्तरदायी था। (ब) मालगुजारी का रिकार्ड रखने वाला। (स) कोटवार जो आपराधिक एवं अन्य महत्वपूर्ण सूचनाएँ शासक को प्रदान करता था।

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व ग्रामीण अर्थव्यवस्था की विशेषताएं :-

आत्मनिर्भरता : गाँव आत्मनिर्भर एवं स्वावलंबी होते थे। आत्मनिर्भरता से तात्पर्य यह है कि ग्रामवासी अपनी

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व ग्रामीण अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ

- ग्रामीण कार्यशील समुदाय की संरचना
- आत्मनिर्भरता
- वस्तु विनिमय प्रणाली
- सरल श्रम विभाजन
- श्रम की गतिहीनता
- बाह्य दुनिया से संपर्क का अभाव

विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति अपने गाँव में ही पूर्ण कर लेते थे। ऐसा दो कारणों से संभव हुआ – एक तो ग्रामवासियों की आवश्यकताएँ सीमित होती थी तथा दूसरे उस समय यातायात एवं संचार के साधनों का अभाव था।

वस्तु विनिमय प्रणाली : प्राचीन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में वस्तु विनिमय प्रणाली प्रचलित थी। सभी दस्तकारों तथा महाजनों से अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ प्राप्त कर लेते थे और बदले में अनाज दिया करते थे। पण्डित, वैद्य, नाई, धोबी सभी की सेवाओं का भुगतान अनाज या अन्य वस्तुओं के रूप में किया जाता था।

वस्तु विनिमय प्रणाली, विनिमय की वह प्रणाली होती थी जिसमें वस्तु के बदले वस्तु या सेवा का प्रत्यक्ष आदान-प्रदान होता था। इसमें मुद्रा का प्रयोग नहीं किया जाता था।

सरल श्रम विभाजन : आर्थिक क्रियाएँ बँटी हुई थी। काम का बँटवारा दो आधार पर था– वंशानुगत या परंपरा के आधार पर यथा कृषि एवं पशुपालन व्यवसाय तथा जाति के आधार पर जैसे लुहार, सुनार, बढ़ई, मोची, नाई, धोबी आदि। यह श्रम विभाजन एकदम सरल था।

श्रम की गतिहीनता : प्राचीन अर्थव्यवस्था की यह एक बहुत बड़ी विशेषता थी। परिवहन के साधनों की कमी, जाति-प्रथा, भाषा एवं खान-पान की कठिनाई के कारण श्रमिक अपने गाँवों में ही रहते थे। गाँव के बाहर प्राय: नहीं जाते थे।

बाह्य दुनिया से संपर्क का अभाव : हर गाँव अपने आप में संपूर्ण इकाई था। जहाँ प्रत्येक व्यक्ति की सारी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती थी। बाह्य दुनिया से कोई विशेष संपर्क नहीं होता था।

राज्य के प्रति उदासीनता: ग्रामवासियों का राज्य की गतिविधियों की ओर कोई विशेष रुझान नहीं होता था।

(ii) अंग्रेजों के आगमन के पश्चात भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था

हम जानते हैं कि अंग्रेजों ने भारत को अपना उपनिवेश बना लिया और लगभग 200 वर्षों तक हमारे देश पर शासन किया। उन्होंने भारत एवं भारतीयों का हर प्रकार से शोषण किया। उन्होंने ऐसी नीतियाँ अपनाई जिसके कारण खुशहाल भारत गरीबी, भुखमरी से जूझने लगा। कृषि एवं उद्योग पर बुरा प्रभाव पड़ा और भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप ही बदल गया। अर्थव्यवस्था की संरचना में निम्नलिखित परिवर्तन सामने आए–

अंग्रेजों के आगमन के पश्चात भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ–

- दस्तकारी एवं हस्तकला का पतन।
- ग्रामीण समुदाय की संरचना में परिवर्तन।
- गांवों की आत्मनिर्भरता की समाप्ति।
- कृषि भूमि का हस्तांतरण।
- कृषि का पिछड़ापन।

दस्तकारी एवं हस्तकला का पतन : अंग्रेजों की नीतियों के कारण भारतीय गाँवों में दस्तकारी का पतन हो गया। गाँव के दस्तकार बेरोजगार हो गए। गाँवों की समृद्धि एवं खुशहाली समाप्त हो गई।

ग्रामीण समुदाय की संरचना में परिवर्तन : ग्रामीण समुदाय जो अब तक कृषक, दस्तकार एवं सेवक तीन भागों में विभाजित था, अब अनेक भागों में विभाजित हो गया– जमींदार, कृषक– भूस्वामी कृषक एवं भूमिहीन कृषक, दस्तकार, कृषक श्रमिक आदि। यह विभाजन कृषि को पिछड़ेपन की ओर ले गया।

आत्मनिर्भरता की समाप्ति : कृषि के वाणिज्यीकरण के परिणामस्वरूप उपज गाँवों से बाहर ले जाकर बेची जाने लगी तथा गाँव की आवश्यकता पूर्ति का सामान बाहर से आने लगा। इस प्रकार गाँवों की आत्मनिर्भरता समाप्त हो गई।

कृषि भूमि का हस्तांतरण : कृषकों में निर्धनता व्याप्त होने के कारण कृषक ऋण लेकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने लगे, किंतु ऋण की वापसी न कर पाने के कारण महाजन ऋण के बदले उनकी जमीन पर कब्जा करने लगे। इस प्रकार कृषि भूमि का हस्तांतरण कृषकों से साहूकारों एवं महाजनों को होने लगा। परिणामस्वरूप कृषक भूमिहीन एवं बेघर होने लगे।

कृषि का पिछड़ापन : अंग्रेजों ने जो जमींदारी प्रथा चलाई उसका कृषि एवं कृषकों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। कृषक निर्धन एवं ऋण ग्रस्त होते गए। भूमि की उत्पादकता एवं सुधार की ओर न तो शासन ने ध्यान दिया और न ही जमींदारों ने, परिणामस्वरूप कृषकों का शोषण होने लगा तथा कृषि की दशा दयनीय होती गई।

(iii) आधुनिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था (स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात्)

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, आधी शताब्दी बीत जाने के बाद भी 2001 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार आज भी भारत की कुल जनसंख्या का 72.2 प्रतिशत भाग गाँवों में निवास करता है तथा शहरी क्षेत्रों में केवल 27.8 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इसी प्रकार आज गाँवों की संख्या 6,38,588 है, जबकि शहरों की संख्या मात्र 5,161 ही है। अर्थात् प्रत्येक 10 व्यक्तियों में से 7 गांवों में रहते हैं। आज भी भारत गाँवों का देश है, और यहाँ की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। देश की दो तिहाई जनसंख्या अपनी आजीविका के लिये प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर ही निर्भर है, परन्तु देश के सकल उत्पाद में कृषि का योगदान केवल 26 प्रतिशत है। पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा देश का आर्थिक विकास तेजी से हुआ है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी इससे अछूती नहीं रही। गाँव का स्वरूप बदलने लगा है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कई परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं। उनमें से प्रमुख परिवर्तन इस प्रकार हैं–

उपलब्ध भूमि के आधार पर समुदाय की संरचना : आज के कृषकों को उनके पास उपलब्ध भूमि के स्वामित्व के आधार पर चार भागों में बाँट सकते हैं –

(i) बड़े कृषक – जिनके पास 2 से लेकर 10 हेक्टेयर तक भूमि है।

(ii) मझोले कृषक – जिनके पास 2 हेक्टेयर या उससे कुछ अधिक भूमि है।

(iii) छोटे कृषक – जिनके पास 2 हेक्टेयर से भी कम भूमि हैं।

(iv) भूमिहीन कृषक – जिनके पास कोई भूमि नहीं है या वे बँटाई पर भूमि लेकर काश्तकारी करते हैं या खेतों में मजदूरी करते हैं।

बहुविध फसलें : आजकल वर्षभर में प्रमुख रूप से तीन फसलें ली जाती हैं। खरीफ, रबी एवं जायद। खरीफ वर्षाकालीन फसलें हैं, जो सितम्बर–अक्टूबर तक प्राप्त हो जाती है। जायद गर्मी की फसल है। आज

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था विशेषताएँ

- उपलब्ध भूमि के आधार पर समुदाय की संरचना
- बहुविध फसलें
- जनसंख्या का शहरों की ओर पलायन
- मौद्रिक प्रणाली का प्रादुर्भाव
- अपर्याप्त संचार एवं आवगमन सुविधाएँ
- सहायक एवं कुटीर उद्योगों का विकास
- तकनीकी उन्नति
- शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार

परंपरागत फसलों के अतिरिक्त कुछ नगदी फसलों का चलन हो गया है जैसे फूलों की खेती, तिलहन आदि।

जनसंख्या का शहरों की ओर पलायन : गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, बुनियादी सुविधाओं की कमी आदि अनेक कारणों से ग्रामीण जनता शहरों की ओर पलायन कर रही है। 1951 में कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत 82.7 प्रतिशत था, जो वर्ष 2011 में 68.8 प्रतिशत रह गया जबकि शहरी जनसंख्या का प्रतिशत 1951 में 17.3 था जो 2011 में बढ़कर 31.2 हो गया।

भारत में स्वतंत्रता के पश्चात ग्रामीण व शहरी जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	ग्रामीण	शहरी
1951	82.7	17.3
1971	80.1	19.9
1991	74.3	25.7
2001	72.2	27.8
2011	68.8	31.2

मौद्रिक प्रणाली का प्रादुर्भाव : गाँवों में पूर्व में प्रचलित वस्तु-विनिमय प्रणाली अब पूर्णतया लुप्त हो गयी है। आज देश में सर्वत्र मुद्रा का प्रयोग होने लगा है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी विनिमय मुद्रा से क्रय-विक्रय प्रणाली से ही पूरी तरह लागू हो गयी है।

अपर्याप्त संचार एवं आवागमन सुविधाएँ : आज गाँव-गाँव को संचार एवं परिवहन के साधनों के माध्यम से जोड़ने का अथक प्रयास किया जा रहा है, परन्तु अधिकांश सड़कें कच्ची हैं। अत: बरसात में आज भी बहुत से गाँवों का अपने आसपास के क्षेत्रों से संपर्क टूट जाता है। वर्ष के शेष समय में ट्रक, बस, रेल से लेकर ट्रेक्टर, जीप, मोटर साइकिल एवं साइकिल का उपयोग होता है। वर्तमान में गाँव टेलीफोन एवं दूरदर्शन के माध्यम से भी जुड़ गए हैं।

सहायक एवं कुटीर उद्योगों का विकास : स्वतंत्रता के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ एवं उन्नत बनाने के उद्देश्य से कुटीर एवं लघु उद्योगों के विकास पर अत्यधिक ध्यान दिया गया है। हर गाँव में स्थानीय कच्चे माल की उपलब्धता के अनुसार छोटे-छोटे घरेलू उद्योग विकसित किये गये जिससे रोज़गार के अवसरों में वृद्धि हुई है और कृषक अपने खाली समय में इन उद्योगों के माध्यम से अपनी आय में वृद्धि कर पा रहे हैं।

तकनीकी उन्नति : गाँवों में किसानों ने अपेक्षाकृत बहुत कम समय में नई प्रौद्योगिकी को अपनाना प्रारंभ कर दिया है। अब सिंचाई के लिये रहट का स्थान पंप ने ले लिया है। हल का स्थान हैरो और बैलगाड़ी का स्थान ट्रक एवं ट्रेक्टर-ट्राली ने ले लिया है। बड़ी मशीनों का उपयोग भी बड़े किसान करने लगे हैं। थ्रेशर का उपयोग अब आम बात हो गई है।

शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार : आधुनिक गाँव शिक्षा एवं स्वास्थ्य के प्रति जागरूक होते जा रहे हैं। बड़े किसानों के बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त करने लगे हैं। गाँव-गाँव में प्राथमिक, पूर्व माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक सरकारी शालाएँ हैं। लड़कों के साथ लड़कियाँ भी शाला में पढ़ने लगी है। गाँवों में चिकित्सा की सुविधाएँ भी उपलब्ध हो गई हैं। प्रचार-प्रसार के माध्यम से भी ग्रामीणों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता आ रही है।

15.3 ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास हेतु सरकारी प्रयास

पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से केंद्र एवं राज्य सरकारों ने ग्रामीणों एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास हेतु प्रारंभ से ही अनेक प्रयास किये हैं, जिनमें पर्याप्त सफलता भी प्राप्त हुई है। फिर भी अभी बहुत से कार्य बाकी हैं। सरकार ने स्वयं सहायता समूहों और पंचायती राज-संस्थानों के माध्यम से विकास कार्यक्रमों में जनभागीदारी को बहुत बल दिया है। सरकारी प्रयासों को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर समझा जा सकता है-

(1) **भूमि सुधार** – जमींदारी प्रथा का उन्मूलन, एवं चकबंदी कर अनार्थिक जोतों को लाभप्रद बनाया है। ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि बहाल करने और उसके हस्तांतरण पर रोक लगाने के लिये सरकारी बंजर भूमि, निर्धारित अधिकतम सीमा से अधिक भूमि एवं भूदान से प्राप्त भूमि आदि का वितरण किया गया है। फसल – बीमा योजना भी प्रारम्भ की गई है। ग्रामीण क्षेत्र में वित्त आपूर्ति हेतु ग्रामीण बैंकों, तथा सरकारी बैंकों की स्थापना कर कृषि के आधुनिकीकरण हेतु ऋण उपलब्ध कराया गया है। फसलों के उचित बिक्री मूल्य हेतु सरकार न्यूनतम–मूल्य निर्धारण करती है। फसलों के भंडारण एवं विपणन हेतु भी व्यवस्था उपलब्ध कराई गई है। गाँव–गाँव को सड़क नेटवर्क से जोड़ने का प्रयास किया गया है। केंद्र सरकार की प्रधानमंत्री सड़क योजना के माध्यम से ग्रामीण इलाकों को बारहमासी सड़कों से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है।

(2) **आवास स्वच्छता एवं स्वास्थ्य :** अस्वास्थ्यकर आवासों के स्थान पर ग्रामों में स्वास्थ्यप्रद आवास व्यवस्था हेतु सरकार ने इंदिरा आवास योजना चलाई है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता हेतु केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम का महत्वपूर्ण योगदान है। इसके अन्य पहलू भी हैं– जीवन में गुणवत्ता लाना एवं महिलाओं को गरिमा प्रदान करना। स्कूलों में सफाई, पेयजल एवं शिक्षण की बुनियादी आवश्यकताओं पर भी ध्यान दिया जा रहा है। गाँवों में परिवार कल्याण केन्द्र एवं आँगनवाड़ी आदि के माध्यम से खान–पान, स्वास्थ्य शिक्षा संबंधी जागरुकता का भी प्रचार–प्रसार किया जा रहा है। इस कार्य में दूरदर्शन एवं आकाशवाणी भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

(3) **कुटीर एवं लघु उद्योग :** ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु कुटीर एवं लघु उद्योगों का अत्यधिक महत्व है। सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में इन्हें विकसित करने के लिए निरंतर प्रयास किया है। जैसे–

1. विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना के द्वारा इन उद्योगों की समस्याओं को सुलझाना। अखिल भारतीय हस्तकरघा उद्योग बोर्ड, भारतीय कुटीर उद्योग, खादी ग्रामोद्योग आदि इसी प्रकार की संस्थाएँ हैं।
2. वित्तीय सहायता हेतु भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक स्थापित किये गए हैं।
3. विपणन में सहायतार्थ सरकारी विभागों द्वारा इनके उत्पादों की खरीदी सुनिश्चित की गई है। इसके अतिरिक्त देश–विदेश में मेले, प्रदर्शनी, हाट आदि का आयोजन किया जाता है।
4. तकनीकी सहायता के लिये प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये गए हैं।
5. इस प्रकार उद्योगों को विभिन्न प्रकार से संरक्षण प्रदान करके बड़े उद्योगों से इनकी प्रतिस्पर्धा को समाप्त किया गया है।

इस प्रकार सरकारी प्रयासों के द्वारा गाँवों के उन्नयन का अथक प्रयास किया जा रहा है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के आदर्शों को आधार बनाकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने का प्रयास जारी है।

15.4 प्राचीन एवं आधुनिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन

	तुलनात्मक आधार	अंग्रेजों के आगमन से पूर्व	अंग्रेजों के आगमन के बाद	स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद
1.	**आत्मनिर्भरता**	गाँव पूर्ण रूप से आत्म–निर्भर थे।	आत्मनिर्भरता क्रमशः कम होती गई।	गाँवों की आत्म निर्भरता समाप्त हो गई।
2.	**कृषि का उद्देश्य**	कृषि का उद्देश्य जीवन–निर्वाह था।	जीवन निर्वाह कृषि से वाणिज्यिक होने लगा	प्रमुख रूप से वाणिज्यिक उद्देश्य हो गया है।

तुलनात्मक आधार		अंग्रेजों के आगमन से पूर्व	अंग्रेजों के आगमन के बाद	स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद
3.	**राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान**	कृषि का योगदान सर्वाधिक था।	कृषि का योगदान सर्वाधिक था।	कृषि का योगदान कम होता जा रहा है।
4.	**आर्थिक स्थिति**	गाँव समृद्ध संपन्न एवं खुशहाल थे।	संपन्नता निर्धनता में बदल गई। कृषकों का अत्यधिक शोषण होने लगा।	निर्धनता, बेरोजगारी विद्यमान है, परन्तु निरन्तर कम हो रही है।
5.	**भूमिहीन कृषक**	सभी कृषकों के पास अपना अपना घर व भूमि में हिस्सा था।	कृषक भूमिहीन हो गए। भूमि का हस्तांतरण कृषकों से महाजनों एवं जमींदारों को होने लगा।	जमींदारी प्रथा समाप्त हो गई, परन्तु भूमिहीन कृषकों की स्थिति में विशेष सुधार नहीं आया।
6.	**कृषि विधियाँ**	कृषि विधियाँ पुरातन थीं खाद, सिंचाई व्यवस्था आदि परंपरागत थीं।	प्राचीन विधियाँ, खाद तथा सिंचाई व्यवस्था परंपरागत थीं।	वर्तमान में प्राचीन एवं आधुनिक दोनों ही विधियों का प्रयोग किया जाता है।
7.	**ग्रामीण वित्त व्यवस्था**	बड़े कृषक, साहूकार महाजन, आदि ऋण प्रदान करने के स्रोत थे।	साहूकारों के अतिरिक्त जमींदार, साहूकार ऋण के स्त्रोत थे। ऋण अदायगी न होने के कारण भूमि का हस्तांतरण हो जाता था।	सहकारी साख समितियाँ, ग्रामीण बैंक आदि वित्त प्रदान करने वाली संस्थाएँ कार्यरत हैं।
8.	**श्रम की गतिशीलता**	भौगालिक एवं व्यवसायिक दोनों ही श्रम में गतिशीलता का पूर्ण अभाव था।	श्रम गतिशील हो गया। यद्यपि गतिशीलता का प्रतिशत बहुत कम था।	भौगोलिक एवं व्यवसायिक दोनों प्रकार के श्रम में गतिशीलता में वृद्धि हुई है।
9.	**परिवहन एवं संचार**	सड़कों एवं यातायात के साधनों का अभाव था। संचार का माध्यम केवल हरकारे थे।	अंग्रेजों ने अपने व्यापार के अनुसार सड़के एवं रेललाइन बिछाई। इससे सड़कें व संचार साधन उपलब्ध हो गए। संचार हेतु डाक, तार, टेलीफोन, रेडियो की सुविधा हो गई।	स्वतंत्रता के बाद सड़कों एवं रेलमार्गों का नेट-वर्क बहुत व्यापक हो गया है। संचार हेतु डाक, तार, फोन, फैक्स, मोबाइल फोन की सुविधाएँ बहुत बढ़ गई हैं। ग्राम पंचायतों में कम्प्यूटर की सुविधा हो गई है।

तुलनात्मक आधार	अंग्रेजों के आगमन से पूर्व	अंग्रेजों के आगमन के बाद	स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद
10. **शिक्षा एवं प्रशिक्षण**	शिक्षा बहुत कम और उच्च वर्गों में थी। प्रशिक्षण की सुविधा नहीं थी।	प्रशिक्षण की सुविधा नहीं थी। शिक्षा उच्च, मध्यम वर्ग में प्रचलित थी। दलितों एवं निम्न आय वर्ग में शिक्षा नहीं थी।	वर्तमान में शिक्षा एवं प्रशिक्षण की सुविधाओं में व्यापक विस्तार हुआ है। सभी वर्गों को शिक्षा के अवसर प्राप्त हैं

इस प्रकार वर्तमान में गाँव एवं ग्रामवासी दोनों का बहुत अधिक विकास हुआ है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ग्रामीणों में जागरुकता आ गई है। जैसे ही उनके पास साधन जुटते हैं वे अपने और अपने परिवार के कल्याण हेतु सक्रिय हो जाते हैं। वे शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य, स्वच्छता, राजनीति के बारे में जानने समझने लगे हैं। जागरुकता से जन सहयोग बढ़ता है, और योजनाओं की सफलता निश्चित हो जाती है।

15.5 आदर्श ग्राम की अवधारणा

किसी भी देश की महत्वपूर्ण धरोहर उसकी धरती तथा उस पर निवास करने वाले लोग होते हैं। भारत की आत्मा उसके गाँवों में बसती है। यह गाँवों का देश है। जिस प्रकार एक भवन ईंट से ईंट मिलकर खड़ा होता है ठीक उसी प्रकार भारत देश का विशाल गणतंत्र गाँवों से मिलकर ही बना है। आज भी भारत की लगभग 72% जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में ही निवास करती है। हम भली-भांति जानते हैं कि इतने वर्षों के प्रयास के बावजूद गाँवों की स्थिति अच्छी नहीं है। आज भी कई गाँव अभावग्रस्त हैं। गाँव का नाम आते ही हमारी आँखों के समक्ष गाँव का एक ऐसा दृश्य सामने आ जाता है जिसमें घास-फूस के झोंपड़े या कच्चे मकान, सूखे खेत, उड़ती धूल, गंदी नालियाँ, नंग धड़ंग भागते खेलते बच्चे, घर के भीतर ही बंधे जानवर, गोबर की गंध, मक्खियाँ, अशिक्षा और कुपोषण ही दिखाई देता है। यद्यपि अब इस स्थिति में निरंतर परिवर्तन हो रहा है।

आदर्श ग्राम की विशेषताएँ

- उन्नत कृषि व्यवस्था
- आवासीय सुविधाएँ
- पेयजल व्यवस्था
- स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएँ
- शिक्षा व्यवस्था
- परिवहन सुविधाएँ
- संचार सुविधाएँ
- ऊर्जा एवं पर्यावरण जागरूकता
- औद्योगिक विकास
- प्रशासनिक व्यवस्था
- वित्तीय सुविधा

देश को अग्रणी बनाने के लिए ग्राम सुधार आवश्यक है। यदि ऐसा हो जाए तो भारत एक समृद्ध, सम्पन्न एवं खुशहाल देश बन सकता है। हमें अपने गाँवों को आदर्श गाँव बनाना पड़ेगा। एक आदर्श ग्राम में कृषि विकसित होना चाहिए तथा शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास की उचित व्यवस्था होना चाहिए। ग्राम में स्वच्छता के प्रति जागरूकता एवं उपलब्ध संसाधनों का संपूर्ण रूप से उपयोग होना चाहिए। इस प्रकार आदर्श ग्राम में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए-

1. **उन्नत कृषि व्यवस्था :** कृषि के विकास हेतु छोटे अनार्थिक खेतों को मिलाकर बड़े खेत बनाने चाहिए। चकबन्दी अपनाई जानी चाहिए। सामूहिक कृषि का प्रयोग, उपज बढ़ाने हेतु जैविक तथा रासायनिक उर्वरक, कृषि के लिए उन्नत बीजों का उपयोग एवं सिंचाई की आधुनिक सुविधाओं का प्रयोग होना चाहिए। उपज भंडारण हेतु उपयुक्त व्यवस्था, सहकारिता एवं शासकीय सहायता से उपज की बिक्री की व्यवस्था होना चाहिए।

2. **आवासीय सुविधाएँ :** ग्राम में आवास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। मकान कच्चे या पक्के हों लेकिन साफ सुथरे होना चाहिए साथ ही घर में स्नान गृह, शौचालय आदि की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। जानवरों के लिए अलग बाड़ा एवं गोबर एकत्र कर उसे बायोगैस बनाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

3. **पेयजल सुविधा :** स्वच्छ पेयजल के लिए कुएं, तालाब, बावड़ी आदि का जीर्णोद्वार होना चाहिए। ग्रामवासी उसमें कचरा आदि न डालें, ऐसी व्यवस्था होना चाहिए। गाँव में भूजल संवर्धन पर ध्यान केन्द्रित होना चाहिए। ग्राम में ग्रामवासियों के लिए उचित पेयजल की व्यवस्था होना चाहिए।

4. **स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएँ :** गांवों में प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र व चिकित्सक की व्यवस्था होनी चाहिए व आवश्यकतानुसार दवाइयों का प्रबंध भी होना चाहिए जिससे ग्राम वासियों की स्वास्थ्य संबंधी कठिनाइयाँ और ग्राम स्तर पर ही रोगों का उपचार किया जा सके साथ ही शासन की स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न योजनाओं का लाभ ग्रामवासी प्राप्त कर सके ।

5. **शिक्षा व्यवस्था :** ग्राम में प्रत्येक बच्चे को शिक्षा देने के लिए प्रयास होने चाहिए ग्रामीणों में बालिका शिक्षा की ओर जागरूकता होनी चाहिए। ग्राम में परंपरागत शिक्षा के साथ-साथ प्रौढ़ शिक्षा की भी व्यवस्था होनी चाहिए। पौष्टिक व स्वच्छ मध्याह्न भोजन की व्यवस्था होनी चाहिए।

6. **परिवहन सुविधाएँ :** गाँव में परिवहन की उचित व्यवस्था हेतु सड़कें होनी चाहिए जिससे गांव आसपास के गाँवों, कस्बों एवं जिला मुख्यालय से जुड़ सके। सड़के ऐसी हो जिनका सभी मौसम में लोग उपयोग कर सकें।

7. **संचार सुविधाएँ :** गाँव में संचार साधनों की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। टेलीफोन, डाकघर तथा इंटरनेट सुविधाएँ आदि उपलब्ध होनी चाहिए।

8. **ऊर्जा एवं पर्यावरण जागरूकता :** गाँवों में ऊर्जा हेतु बिजली की व्यवस्था होनी चाहिए। संभव हो तो वैकल्पिक ऊर्जा का भी प्रयोग किया जाए। ग्रामवासियों में पर्यावरण के प्रति जारूकता होनी चाहिए। ग्रामवासी गाँव में अवशिष्ट पदार्थों का उचित उपयोग करें तथा यदि संभव हो तो उनका पुनः उपयोग करें ऐसी व्यवस्था हो। वृक्षों के उपयोग व वृक्षारोपण के प्रति ग्रामीण सक्रिय हों, जिससे गांव में हरियाली व्याप्त हो सके।

9. **औद्योगिक विकास :** ग्राम में कृषि आधारित उद्योगों का विकास होना चाहिए जैसे कि डेयरी उद्योग, कुक्कुट उद्योग आदि। ग्राम में कुटीर उद्योगों का विकास हो सकता है। जिससे ग्रामवासियों को उन्हीं के गांव में रोजगार भी मिल सके एवं उनकी आय में भी वृद्धि हो सकें ।

10. **प्रशासनिक व्यवस्था :** हमारे गांवों में पंचायत व्यवस्था है। ग्राम पंचायत के सदस्य व सरपंच गांव के विकास के प्रति जागरूक एवं सक्रिय होने चाहिए। जिससे गांवों में स्वच्छता, पेयजल, स्वास्थ्य, सुरक्षा संबंधी व्यवस्थाएँ ग्राम वासियों को प्राप्त हो सके। ग्राम पंचायत में प्रशासकीय पारदर्शिता बढ़ानी चाहिए। गाँव के हर कार्यालय जिसमें ग्राम सचिवालय, पंचायत भवन, आंगनबाड़ी, सहकारी समिति, शाला भवन आदि के कर्मचारियों को अपने दफ्तर को पूरी तरह से स्वच्छ रखने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। इन सभी भवनों पर स्थाई रूप से उनका नाम लिखा होना चाहिए।

11. **वित्तीय सुविधा :** ग्रामीण जन वित्तीय सुविधाओं के लिए मुख्यतः साहूकारों एवं महाजनों आदि पर निर्भर रहते हैं जो कई बार उनका शोषण करते है। आदर्श ग्राम में ग्रामीण बैंक व सहकारी बैंक आदि की सुविधा होना चाहिए। जिससे ग्रामवासी वित्तीय सुविधाएँ प्राप्त कर सके। गांवों में स्वसहायता बचत समूहों के निर्माण के प्रति भी ग्रामीणों को जागरूक करके बचत की आदत में वृद्धि करायी जा सकती है।

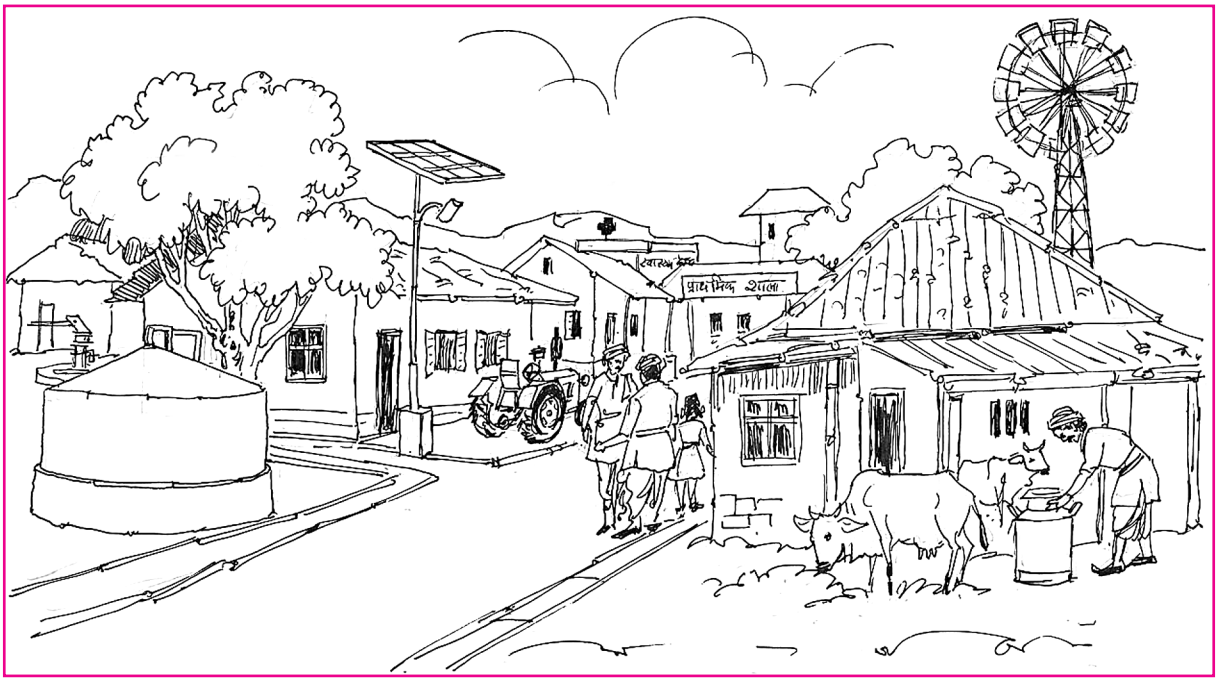

15.6 मध्यप्रदेश के चयनित ग्राम का आर्थिक अध्ययन

हम सब चाहते है कि भारत एक उन्नत, खुशहाल, समृद्ध और सम्पन्न देश बने। हमारा यह सपना तभी पूरा हो सकता है जब हमारे गाँवों की परिस्थितियों और जनजीवन की कमियों और विशेषताओं को हम समझें और उनमें सुधार ला सकें। हम किसी एक गाँव का अध्ययन करके उस गांव में उपलब्ध संसाधनों व सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए उस गांव की प्राप्त असुविधाओं व समस्याओं के समाधान हेतु ग्रामवासियों के सहयोग से गांव में उसका हल ढूंढकर समाधान हेतु प्रयास कर सकते हैं।

आर्थिक अध्ययन से तात्पर्य है कि एक क्षेत्र विशेष में उपलब्ध संसाधन वहाँ की जनसंख्या, आजीविका के साधन, आर्थिक स्थिति, परिवहन, संचार के साधन, वानिकी, उद्यानिकी, हाट-बाजार, वित्त, सामाजिक एवं सामुदायिक स्थितियों का अध्ययन करना। किसी गाँव के आर्थिक अध्ययन के लिए सर्वप्रथम अध्ययन का उद्देश्य निर्धारित करना होता है। तत्पश्चात अध्ययन का क्षेत्र सुनिश्चित कर अध्ययन योजना बनाई जाती है। किसी भी अध्ययन के लिए आवश्यक सांख्यिकीय जानकारी (आंकड़ों) तथा तथ्यों की आवश्यकता होती है। कुछ सांख्यिकीय जानकारी ग्राम/जिला स्तर पर विभाग के ग्राम विकास खण्ड, तहसील या जिला स्तर के अधिकारियों के पास उपलब्ध होती है और कुछ जानकारी एकत्रित करनी पड़ती है। इस हेतु सामान्यत: तालिका एवं प्रश्नावली का निर्माण किया जाता है।

मध्यप्रदेश के किसी एक गांव के अध्ययन के उदाहरणस्वरूप यहां पर मुरैना जिले के दिमनी गाँव का चयन कर उसका आर्थिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

ग्राम की भौगोलिक स्थिति : ग्राम दिमनी, मुरैना महगाँव राजमार्ग पर मुरैना नगर से 17 किलोमीटर उत्तर दिशा की ओर स्थित है। प्रशासनिक दृष्टि से यह मध्यप्रदेश राज्य के शीर्ष उत्तर में मुरैना जिले की तहसील

ग्राम दिमनी

क्षेत्रफल	-	383 हैक्टेयर
जनसंख्या	-	2,346
जनसंख्या घनत्व	-	612 व्यक्ति
औसत वर्षा	-	70 से.मी.
मिट्टी	-	दोमट, कछारी एवं कंकरीली
प्रमुख व्यवसाय	-	41 प्रतिशत में कृषि

अम्बाह का राजस्व ग्राम है। इस राजस्व ग्राम का कुल क्षेत्रफल 383 हैक्टेयर है।

जलवायु : ग्राम दिमनी की जलवायु पर महाद्वीपीय एवं उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु के प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। ग्रीष्मऋतु में अधिक गर्मी व शीत ऋतु में अधिक शीत यहां की जलवायु की विशेषता है। वर्षा की अनियमितता एवं अनिश्चितता यहां पाई जाती है। यहाँ वर्षा का वार्षिक औसत 70 सेंटीमीटर है।

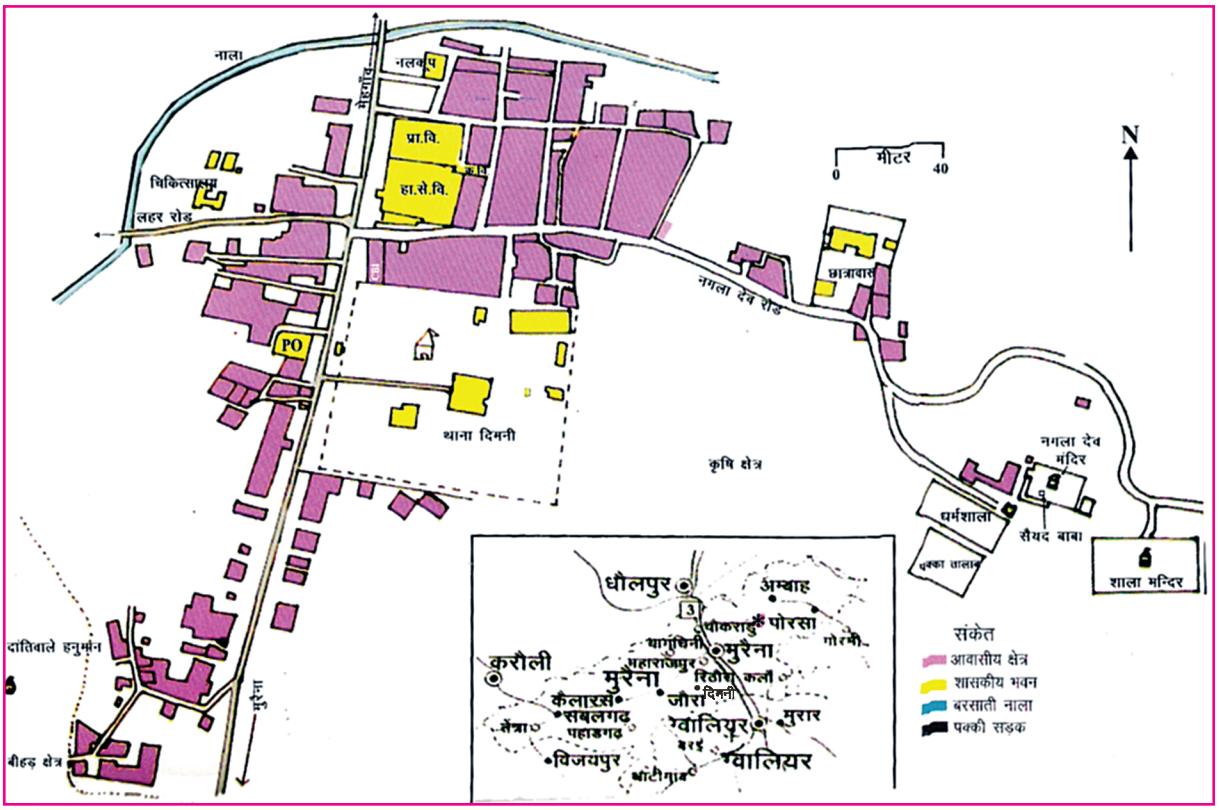

ग्राम-दिमनी, जिला- मुरैना (म.प्र.)

मिट्टी एवं वनस्पति : ग्राम दिमनी की आर्थिकी मूलतः कृषि पर आधारित है अतः उपजाऊ मिट्टी यहाँ के निवासियों की आवश्यकता है। सामान्यतः यहाँ दोमट, कछारी एवं कंकरीली मिट्टियों का विस्तार है। गाँव नदी के अपरदन से प्रभावित है। गाँव के पश्चिमी भाग में बीहड़ है। मिट्टी अपरदन एवं बीहड़ प्रसार, मिट्टी की उत्पादकता को प्रभावित कर रहे हैं। वर्षा जल के तेज बहाव एवं निकटस्थ नदी प्रवाह के कारण मिट्टी में आर्द्रता की कमी अंकित की गई है। अतः कृत्रिम सिंचाई यहां कृषि के लिए आवश्यक हैं। ग्राम को जहाँ एक ओर क्वारी नदी का लाभ प्राप्त है वहीं दूसरी ओर अपरदन प्रसार एवं यदा-कदा बाढ़ से क्षति भी होती है।

नदी अपरदन (क्वारी नदी)

यहाँ अर्द्ध शुष्क मानसूनी पतझड़ पेड़-पौधें हैं। नीम यहां का एक उपयोगी वृक्ष है। ग्राम के चारों ओर बबूल की कांटेदार वनस्पति भी देखने को मिलती है जिसका प्रसार आवासीय क्षेत्र में भी है। छेकुर जैसे कंटीले वृक्ष करील जैसी कटीली झाड़ियाँ सरपत्ता व डाव जैसी घास वनस्पति यहाँ पाई जाती है जिनसे कि रस्सी बनाई जाती है इनका उपयोग झोपड़ियों के निर्माण में किया जाता है। गाँव में बरगद, शीशम, पाकरी व पीपल के वृक्ष भी है। आक भी यहाँ अधिक संख्या में है।

जनसंख्या : दिमनी की जनसंख्या ग्राम के पुनर्स्थापना वर्ष 1971-72 में 1088 थीं तथा इस ग्राम का जन घनत्व 284 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर था। वर्ष 2001 की जनगणना में यह जनसंख्या बढ़कर 2,346 हो गई तथा यहां की जनसंख्या का घनत्व 612 व्यक्ति प्रति वर्ग किलो मीटर हो गया है, किन्तु एक अधिवासी इकाई के रूप में सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त आंकड़ों के अनुसार गांव में 18 वर्ष से कम आयु की जनसंख्या सबसे अधिक है अर्थात् 46 प्रतिशत हैं। कार्यशील जनसंख्या (18-60 आयु वर्ग का) कुल जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत योगदान है। 60 वर्ष से अधिक के लोग मात्र 35 प्रतिशत हैं। वर्ष 2006 में ग्राम दिमनी की कुल जनसंख्या 2115 पायी गयी। कुछ लोगों द्वारा ग्राम से पलायन किए जाने की संभावना है।

जनसंख्या संरचना ग्राम दिमनी-2006

क्रमांक	आयु वर्ग	पुरुष	स्त्री	योग	कुल जनसंख्या में आयु वर्ग का %
1.	बच्चे व किशोर (18 वर्ष से कम)	537	435	972	46.0
2.	युवा (18 से 35 वर्ष)	385	349	734	34.7
3.	प्रौढ़ (35 से 60 वर्ष)	184	151	335	15.8
4.	वृद्ध (60 वर्ष से अधिक)	51	23	74	3.5
	योग	**1157**	**958**	**2115**	**100**

प्राप्त आँकडों के अनुसार गाँव में 18 वर्ष से कम आयु की जनसंख्या सबसे अधिक अर्थात 46% है। कार्यशील जनसंख्या (18-60 आयु) का कुल जनसंख्या में 50% योगदान है।

आवासीय स्वरूप : आवास के स्वरूप के आधार पर यहाँ के आवासों को चार भागों में बाँटा जा सकता है। पक्के, कच्चे, मिश्रित एवं झोपड़ीनुमा आवास।

आवासों का स्वरूप

क्रमांक	आवासीय स्वरूप	कुल आवास संख्या	कुल आवासों में प्रतिशत
1.	पक्के आवास	120	56.6
2.	कच्चे आवास	25	11.8
3.	कच्चे-पक्के मिश्रित आवास	31	14.6
4.	झोपड़ी नुमा आवास	36	17.0
	योग	**212**	**100.0**

ग्राम दिमनी के कुल आवासों में 11.8% आवास कच्चे हैं, जिनमें निर्माण सामग्री के रूप में स्थानीय मिट्टी तथा लकड़ी का प्रयोग किया गया है। 14.60% आवास पक्के व कच्चे मिश्रित प्रकार के है, इन मकानों में आगे के भाग को पक्का और आंतरिक भाग को कच्चा रखा गया है। इस गाँव के 17% आवास झोपड़ीनुमा है जिनमें चार दीवारी मिट्टी की बनी है। झोपड़ियाँ ग्राम के दक्षिणी पश्चिमी व पूर्वी भाग में स्थित है। स्वामित्व की दृष्टि से ग्राम दिमनी में 98.6% आवास (कुल 209) निजी स्वामित्व के है। जबकि 1.4% आवास (03) किराये के है जो कि शासकीय आवास है।

ग्राम की आर्थिक संरचना : ग्राम दिमनी की आर्थिक संरचना भी मूलत: कृषि आधारित है। अधिकांश व्यक्ति कृषि कार्य करते है अथवा गृह कार्यों के साथ-साथ प्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्य में सहयोग करते है। कृषि कार्य में पुरुषों की संख्या अधिक है। स्त्री जनसंख्या का अधिकांश भाग गृह कार्य में लगा हुआ है।

कार्यशील जनसंख्या ग्राम दिमनी

क्रमांक	कार्य	संलग्न जनसंख्या			कुल कार्यशील जनसंख्या का %
		पुरुष	स्त्री	योग	
1.	कृषि	310	28	338	41.00
2.	गृह कार्य	2	318	320	38.00
3.	सेवा कार्य	75	07	82	10.00
4.	कामगार मजदूर	49	06	55	7.00
5.	व्यापार व वाणिज्यिक कार्य	35	00	35	4.00
	योग	**471**	**359**	**830**	**100.00**

ग्राम दिमनी की कुल जनसंख्या में सर्वाधिक 40% कृषि कार्य में संलग्न हैं इनमें 92% पुरुष तथा केवल 8% महिलाएं हैं जबकि सबसे कम कार्यशील जनसंख्या व्यापार एवं वाणिज्य में संलग्न है। गृह कार्य में 99% प्रतिशत महिलाएं है।

सेवा कार्यों में संलग्न व्यक्ति कुल कार्यशील जनसंख्या के 10% है। दैनिक आवश्यकता आपूर्ति के प्रतिष्ठान, कृषि आदान व उपकरण बिक्री केन्द्र तथा क़ृषि उत्पाद व पशुओं का व्यापार यहाँ के प्रमुख वाणिज्यिक व व्यापारिक कार्य है। इन कार्यों में शत-प्रतिशत पुरुष ही संलग्न हैं। व्यवसायिक प्रतिष्ठान मुख्यत: सड़क मार्ग के सहारे विकसित है। बस्ती क्षेत्र में दैनिक आपूर्ति हेतु संचालित दुकानों की स्थिति अति दयनीय है। अन्य कामगार जनसंख्या में बैण्ड वादक, मजदूर व दस्तकार सम्मिलित हैं। सम्पूर्ण कार्यशील जनसंख्या में कोई भी बाल श्रमिक नहीं है तथापि यहाँ घरों में बालिकाएं महिलाओं को माला बनाने में सहयोग करती है।

गाँव में माला बनाने के काम में संलग्न बालिकाएँ

व्यक्ति साक्षात्कार द्वारा ली गई जानकारी के आधार पर परिवारों का आय स्तर निम्नलिखित तालिका में अंकित किया गया है।

परिवारिक आय ग्राम दिमनी

क्रमांक	कुल वार्षिक आय प्रति परिवार रूपये	परिवार संख्या	स्तर	परिवारों का प्रतिशत
1.	5000 से कम	70	निम्नतम	33.0
2.	5000 से 10000	39	निम्न	18.4
3.	10000 से 20000	38	निम्म मध्यम	17.9
4.	20000 से 50000	37	मध्यम	17.5
5.	50000 से अधिक	28	उच्च	13.2
	योग-	**212**		**100.00**

ग्राम में अधिकांश परिवार अर्थात लगभग एक तिहाई परिवारों की वार्षिक आय रू. 5,000/- से भी कम है।

रहन-सहन का स्तर : ग्राम के पारिवारिक सर्वेक्षण में रहन-सहन के स्तर मापन हेतु निम्नलिखित चार मापदंड तय किये गये- (1) आवासीय भवन का स्वरूप। (2) गृह उपयोगी भौतिक साधन। (3) दैनिक आवागमन हेतु स्वयं के वाहन व संचार साधन एवं (4) विद्युत व जलपूर्ति। इन मानदंडों के आधार पर रहन-सहन स्तर मापन हेतु प्रत्येक भौतिक साधन के उपयोग को उपयोगिता गुणवत्ता व मूल्य के आधार पर मूल्यांकित कर स्तरों का निर्धारण किया गया है। जिससे प्राप्त जानकारी तालिका में दर्शायी गयी।

परिवारों के रहन-सहन स्तर ग्राम दिमनी-2006

क्र.	वर्ग	स्तर	कुल परिवार की संख्या	
1	**पक्के दो मंजिल आवास** ● रंगीन टीवी, फ्रीज, वाशिंग मशीन, गैस चूल्हा व अन्य सामान ● जीप एवं कार टेलीफोन व मोबाइल ● विद्युत व जल प्राप्ति की उचित व्यवस्था	उच्च	23	11.8 %
2	**पक्के आवास** ● टीवी, कूलर, पंखा एवं गैस चूल्हा स्टोव व अन्य सामान ● मोपेड स्कूटर, मोटर साइकिल, ट्रेक्टर, टेलीफोन व मोबाइल ● विद्युत प्रकाश व जल प्राप्ति की सामान्य व्यवस्था	मध्यम	84	40.0 %
3	**मिश्रित कच्चे एवं झोपड़ीनुमा मकान** ● पंखा, स्टोव, सामान्य चूल्हे ● साइकिल, बैल गाड़ी, पैदल ● विद्युत व जल प्राप्ति की निम्न व्यवस्था	निम्न	105	49.0 %
	योग-	**औसत**	**212**	**100%**

ग्राम दिमनी के लगभग आधे परिवार (49%) निम्न रहन-सहन स्तर के अंतर्गत है जबकि 10.8% परिवारों का स्तर यहाँ उच्च निरूपित किया गया है। यहाँ के 40% परिवार रहन-सहन की दृष्टि से मध्यम स्तर के हैं, तथा 41.9% परिवार गरीबी रेखा के नीचे है।

आर्थिक अध्ययन के परिणामस्वरूप इस ग्राम में मुख्यतः निम्न समस्याओं की जानकारी प्राप्त हुई-

1. गाँव में सिंचित क्षेत्र सीमित मात्रा में है, तालाब तथा कुंओं से ही सिंचाई हो पाती है। अतः कृषि उत्पादकता कम है।
2. ग्रामीण अधिभार भू-क्षरण तथा अपरदन से प्रभावित है। दक्षिण पश्चिम आवासीय क्षेत्र में समस्याएँ सर्वाधिक है।
3. जल स्त्रोतों का समुचित दोहन नहीं- जो भी उपलब्ध जल संसाधन हैं उनका पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता है। जो पंप लगे हैं विद्युत की कमी से उनका उपयोग पूरी तरह से नहीं हो पाता है।
4. न्यूनतम आय की स्थिति होने पर भी पारिवारिक व सामाजिक कार्यक्रमों पर अधिक खर्च करते हैं। जैसे- विवाह पर लगभग बीस हजार से दस लाख तक की राशि खर्च कर देते हैं। इसी प्रकार शोक कार्यक्रमों में दस हजार से चालीस हजार तक की राशि खर्च करना। त्यौहारों में 500 से 2000 तक राशि खर्च करना इत्यादि।
5. नियोजित अधिवासी इकाई में भी कूड़ा कचरा इकट्ठा करने की उचित व्यवस्था नहीं है। फलतः कचरे की गंदगी सड़कों तक आती है तथा कृषि हेतु कम्पोस्ट खाद की निर्मिती नहीं हो पाती है।
6. गाँव में किसी प्रकार के रोजगार आदि का साधन नहीं है। जो विभिन्न व्यवसाय और फसलें है वो पूरे वर्ष आय देने वाली नहीं है। मजदूरी के लिए लोग गाँव से बाहर पलायन करते हैं और शोषण का शिकार हो जाते हैं तथा कम मजदूरी पर काम करते है।

ग्राम दिमनी की आर्थिक समस्याओं के निवारण हेतु सुझाव-

- कुंवारी बीहड़ प्रसार को रोकने हेतु विशेष प्रयास किये जाने चाहिए। बीहड़ के किनारे मिट्टी के बांध बनाये जाये तथा वर्षा जल को स्थान-स्थान पर अवरूद्ध करते हुए जल बहाव हेतु पक्की नालियाँ बनाई जा सकती हैं।
- ग्रामीणों को जैविक खाद बनाने की विधि व उसके महत्व से परिचित कराने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा स्वच्छता हेतु जन जाग्रति के प्रयास किये जाने चाहिए।
- गाँव में कृषि उत्पादन हेतु भंडार गृह बनाये जाएं तथा गाँव में तेलघानी उद्योगों के विकास हेतु प्रयास किये जाएं जिससे कि कृषकों का आर्थिक विकास संभव हो सके।
- स्वरोजगार के अवसरों में वृद्धि की जाए। मूलरूप से डेयरी उद्योग के विकास पर अधिक ध्यान दिया जा सकता है।
- बचत की प्रवृत्ति को बढ़ाने हेतु स्वसहायता समूह बनाने के प्रयास किए जा सकते हैं। साथ ही ग्रामवासियों को अनावश्यक व्यय न करने हेतु जागरूक करने हेतु ग्राम पंचायत बैठकों, शाला प्रबंधन समिति की बैठकों इत्यादि में चर्चा की जा सकती है।

उपरोक्त सुझावात्मक प्रयासों के अलावा ग्राम पंचायत व ग्राम में शिक्षा से जुड़े व्यक्तियों द्वारा ग्राम में उपलब्ध संसाधनों का बेहतर उपयोग करते हुए सम्भावित प्रयासों द्वारा गांव की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। ग्रामवासियों को जागरूक व सक्रिय करने में शिक्षकों की भूमिका अहम् है।

शब्दावली

जमींदारी प्रथा : लार्ड कार्नवालिस ने 1793 में सर्वप्रथम बंगाल में यह प्रथा प्रारंभ की, जिसमें भू-राजस्व एकत्रित करने के लिए जमींदार नियुक्त किए गए। जमींदार, भू-राजस्व एकत्रित करने के लिए सरकार और किसानों के बीच मध्यस्थ बन गए।

चकबन्दी : यह वह प्रक्रिया है, जिसमें किसान की छितरी छोटी-छोटी जोतों के बदले उसी किस्म का उतने ही आकार का एक (या दो) भूखण्ड लेने के लिए किसान को तैयार किया जाता है या चकबन्दी ऐच्छिक के साथ-साथ अनिवार्य भी होती है।

भूमि सुधार : किसी संगठन या भूमि व्यवस्था की संस्थागत व्यवस्था में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन से है। भूमि स्वामित्व एवं भूमि जोत में होने वाला सुधार भूमि सुधार के अन्तर्गत आता है।

श्रम विभाजन : श्रमिकों में उनकी विशेष योग्यताओं के अनुसार कार्यों का बंटवारा।

वस्तु विनिमय : वस्तुओं का, वस्तुओं के बदले लेन-देन।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही विकल्प चुनकर लिखिए-

1. पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में साधनों पर स्वामित्व होता है-
   (i) सरकार का (ii) निजी व्यक्तियों का
   (iii) दोनों का (iv) उपर्युक्त में कोई नहीं
2. सिंचाई सुविधायें बढ़ाने के लिये किस मुगल शासक ने नहरें प्रमुखता से बनवाई-
   (i) मोहम्मद तुगलक (ii) अकबर
   (iii) शाहजहाँ (iv) हुमायूँ
3. अंग्रेजों के आगमन के पूर्व ग्रामीण अर्थव्यवस्था थी-
   (i) मुद्रा आधारित (ii) आत्मनिर्भर
   (iii) आयात पर निर्भर (iv) उपर्युक्त में से कोई नहीं
4. 2001 में भारत में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत था-
   (i) 21.4 (ii) 32.8
   (iii) 65.1 (iv) 72.2
5. भारत में भूमि सुधार कब प्रारम्भ किया गया-
   (i) स्वतंत्रता के पश्चात (ii) अंग्रेजों के आगमन से पूर्व
   (iii) वैदिक काल में (iv) उपर्युक्त में से कोई नहीं

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए-

1. ..... एक प्रणाली है जिसके द्वारा मनुष्य जीविकोपार्जन करता हैं।
2. आजकल वर्षभर में प्रमुख रूप में ..... फसलें ली जाती है।
3. अंग्रेजों के आगमन से पूर्व कृषि का उद्देश्य ..... था।
4. ..... ने जमींदारी प्रथा चलाई।

सत्य/असत्य बताइए-

1. फसलों के उचित बिक्री मूल्य हेतु सरकार न्यूनतम मूल्य निर्धारण करती है।
2. अंग्रेजों के आगमन के बाद गाँव आत्मनिर्भर हो गए।
3. अनार्थिक खेतों को मिलाकर चकबंदी के द्वारा आर्थिक खेत बनाए।
4. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान बढ़ता जा रहा हैं।

अतिलघुत्तरीय प्रश्न-

1. अर्थव्यवस्था का आशय स्पष्ट कीजिए।
2. अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारत के गाँव किस प्रकार के थे?
3. गाँवों की आत्मनिर्भरता से क्या आशय है?
4. प्राचीन समय में गाँव की कार्यशील जनसंख्या के प्रमुख अंग कौन से थे?

लघुत्तरीय प्रश्न-

1. अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारतीय ग्रामीण कार्यशील समुदाय की संरचना बताइए।
2. अंग्रेजों के आगमन के पश्चात कृषि भूमि का हस्तांतरण क्यों होने लगा?
3. प्राचीन भारत में वस्तु विनिमय प्रणाली क्यों प्रचलित थी?
4. जनसंख्या का गाँव से शहरों की ओर पलायन क्यों होने लगा? समझाइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न-

1. भारत की प्राचीन ग्रामीण अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ बताइये।
2. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था में क्या परिवर्तन हुए एवं विकास हेतु शासन ने क्या प्रयास किए? लिखिए।
3. कुटीर एवं लघु उद्योग भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था को उन्नत बनाने में किस प्रकार सहायक है? समझाइए।
4. प्राचीन एवं आधुनिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।
5. एक आदर्श ग्राम की विशेषताएँ क्या-क्या होती हैं? लिखिए।
6. किसी गाँव को आत्मनिर्भर व विकासशील बनाने के लिए क्या-क्या प्रयास करने की आवश्यकता होती है? लिखिए।

❖❖ ★★ ❖❖